विजयपथ

लेखिका : इन्दु सोनवानी

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Indu Sonwani 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7825-600-4

Cover Design and Illustration: Ankur Sonwani (Civil Engineer)
Typesetting: Tanya Raj Upadhyay

First Edition: November 2026

माँ

जीवनी

–: प्रकाशन :–
सौजन्य से
श्रीमती इन्दु सोनवानी
ए135, सिध्दार्थ लेक सिटी
रायसेन रोड, भोपाल–462022 (म.प्र.)
मोबाइल :– 9425614501

प्रकाशन वर्ष : अक्टूबर 2026

स्व: श्री विजय कुमार सोनवानी जी

की पावन स्मृति में

"विजयपथ" समर्पित

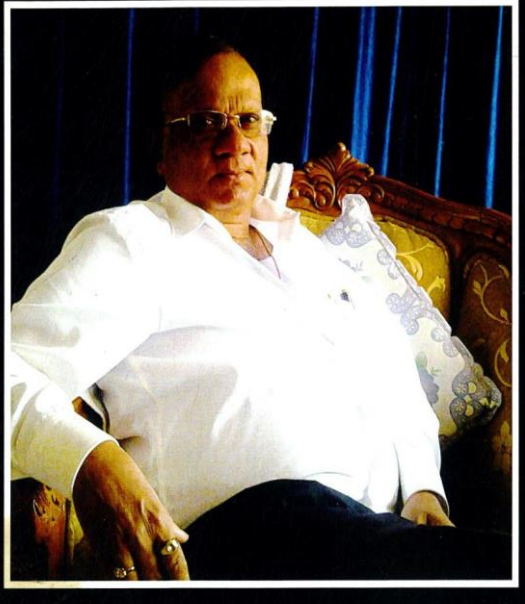

पुष्पाजंलि



''मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता''

यदि माँ धैर्य है, तो साहस है पिता।

यदि माँ श्रृद्धा है, तो विश्वास है पिता।

मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता ।।

यदि माँ धरती है, तो आसमान है पिता।

जन्म दिया है, माँ ने, तो हमारी पहचान है पिता।

मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता ।।

माँ हम दर्द तो, हम सफर है पिता।

माँ दर्द को, तो जज्बातों को समेटे रहता है पिता।

मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता ।।

है, आज समक्ष नहीं वो मेरे पर दिल में है सदा

गुजरे दिनों की तस्वीर है घेरे, स्मृति में है पिता

मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता ।।

जो न कभी थका, न कभी रूका, शीर्ष शिखर पर रहा सदा

जीवन भर है, संघर्ष किया, पर कभी झुके ना मेरे पिता

मेरा अभिमान, मेरा स्वाभिमान है पिता ।।

सुपुत्री

डॉ. जूही सोनवानी

शिशु रोग विशेषज्ञ,

एम्स, भोपाल।

समर्पित कविता



नील गगन में चमक रहा है जैसे एक ध्रुव तारा।
अमर रहेगा इस दुनियाँ में नाम ऐ विजय तुम्हारा।

1. जीवन के पथ पर जो तुमने फूल अनेक खिलाये है
साथ हवाओं में मिलकर के खुशबू जो बिखराये हैं
जाने कितने अंधकार जीवन में ज्योति जलाये है
कितने भटके राही को जो तुमने राह दिखाये है
जाने कितने ही कस्ती को तुमसे मिला किनारा
अमर रहेगा इस दुनियाँ मे नाम ऐ विजय तुम्हारा
2. कहाँ खो गई फूलों जैसी होठों की मुस्कान तुम्हारी
राजा महाराजाओं जैसी वो शौकत और शान तुम्हारी
राह ताकते घर के हर दरवाजे तुम्हारी आने की
तस्वीरों की तरह बसी है हर दिल में पहचान तुम्हारी
आकर दे दो गुलशन के नन्हें पौधों को सहारा
अमर रहेगा इस दुनिया मे नाम ऐ विजय तुम्हारा
3. जाने किसकी नजर लग गई गुलशन की हरियाली को
कौन उड़ा के कहाँ ले गया बगिया के उस माली को
तरस रही है फूलों की कलिया सुबह की उस लाली को
छूने को हर लता तरसती है हर डाली–डाली को
जाने क्यों एक आस लगी है होगा मिलन दोबारा
अमर रहेगा इस दुनियाँ में नाम ऐ विजय तुम्हारा
4. जाने वाले नहीं लौटते पर तुम लौट के आओगे
ऐसा लगता है जाने किस मोड़ मे तुम मिल जाओगे

काम अधूरे है कुछ बाकी पूरा उन्हें भी करना है
किसी रूप में आकर अपना वादा तुम्ही निभाओगे
श्रृद्धा सुमन खुशी से कर लो अब स्वीकार हमारा
अमर रहेगा इस दुनियाँ मे नाम ऐ विजय तुम्हारा

श्री महेशदास सोनवानी
जिला– मंडला

समर्पण



पूज्यनीय श्रृध्देया माँ

श्रीमती कुन्तीदेवी परवार

को मेरी पुस्तक ''□□□□□□□*''

सादर समर्पित

दृढ़ एवम् अचल



अचल रहा हो अपने पथ पर,
लाख मुसीबत आने में।
मिली सफलता जग में उसको,
जीने में मर जाने में।
खड़ा हिमालय बता रहा है,
डरो न आंधी पानी में।
खड़े रहो तो अपने पथ पर,
सब कठिनाई तूफानों में।।

सुपुत्र
डॉ. अविनाश मानिकपुरी
एम.डी. मेडिसिन

''संदेश''



पंडित श्री मुकेश नायक जी

पूर्व शिक्षा मंत्री (काँग्रेस)

''विजयपथ'' में समाहित भाव मानवीय जिज्ञासाओं की पूर्ति के संदर्भ में यथार्थ धरातल पर दार्शनिक चित्रण है। मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ, लेखिका इन्दु सोनवानी ने इस प्रेरणादायी कृति के माध्यम से समूचे मानस को लाभान्वित करने का प्रयास किया। ऐसा मेरा विश्वास है।

लेखिका श्रीमति इन्दु सोनवानी एक बहु आयामी प्रतिभा की धनी है। पाठकों को उनकी कृति में नवीनता और ताजगी महसूस होगी। उन का चिन्तन पाठको के लिये ऐसा पथ प्रशस्त करेगा, जिसका हर पड़ाव प्रेरकराग मुखरित करेगा।

''विजयपथ'' की सफलता के लिये हार्दिक शुभकानाएँ

भवदीय

पंडित श्री मुकेश नायक जी

संदेश



श्रीमती कृष्णा गौर

विधायक

विजयपथ पुस्तक का मैंने अध्ययन किया है, यह मानस के मानस का जीवन दर्शन है। मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्नता है, कि लेखिका इन्दु सोनवानी की प्रथम स्मृति (विजयपथ) प्रकाशित होने जा रही है। जिसमें मानव जीवन के संघर्ष व मानव दर्शन का चित्रण है। इस कृति में मानवीय एवं अनुभव का समन्वित प्रस्तुतिकरण बड़े ही मार्मिकता से किया गया है।

विजयपथ के प्रकाशन से मानवीय मूल्यों व मानवीय जिज्ञासाओं कि पूर्ति में सहायता मिलेगी। मुझे पूर्ण विश्वास है, कि शब्दों की संकलित यह ऊर्जा मानवता के कल्याणार्थ एक सफल प्रस्तुतिकरण होगा। अनन्त शुभकामनाओं सहित।

भवदीय



श्रीमती कृष्णा गौर
राज्यमंत्री (स्वतंत्र प्रभार)

संदेश



लेखिका श्रीमती इंदु जी ने अपने पति श्री विजय जी की जो स्मारिका लिखी है, इसमें मानो उन्होंने अपने संपूर्ण हृदयोद्‌गार ही उड़ेल दिए हैं । एक –एक पंक्ति में शब्दपुष्पों द्वारा इतने मार्मिक और सुंदर भाव से सजा दिए हैं कि बरबस आँखें आर्द्र हो जाती हैं। आज भी पति स्व. श्री विजय जी के संग विताये वर्ष और पलों की स्मृतियाँ उनके स्मृति–पटल पर अंकित हैं। यद्यपि वे शरीर से उनके मध्य नहीं हैं, तथापि उनकी आशीर्वाद रूपी ऊर्जा इंदु जी व बच्चों को सदैव मिलती रहे ऐसी प्रभु से कामना करती हूँ। सादर नमन्..

डॉ. रंजना शर्मा

एम.ए., पी.एच.डी.

भावांजली



पूज्यनीय पिताजी स्व. श्री विजय कुमार सोनवानी जी की पुण्यतिथि पर (दो शब्द) या भावाजंलि मेरे पूज्य पिताजी को शत्–शत् नमन आज दिनांक 22.08. 2026 को मेरे पिताजी की नवीं पुण्यतिथि है। आज वह हमारे बीच नहीं है, परंतु उनका आशीष, उनका प्रेम, उनका मार्गदर्शन, उनकी शिक्षा हमारे साथ आज भी है, जो हमें यह एहसास दिलाता है कि वो आज भी हमारे बीच में है। बस अंतर इतना है कि पहले शरीर भी था पर आज शरीर नहीं पर उनकी आत्मा हमारे दिलों में बसी है जो अमर है कहते हे 'शरीर मिट जाते है पर आत्मा अमर रहती है', यह अटल सत्य है। इसलिए मैं आज उनकी महान आत्मा को नमन करता हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्मा को उच्च स्थान व शांति प्रदान करें।

पिता की भूमिका एक परिवार में अनमोल होती है जिसकी हम आप कल्पना नहीं कर सकते उनके रहने या न रहने से कितना खाली या अधूरा स्थान होता है। यह मैंने उनके जाने के बाद महसूस किया है। पिता भले ही कुछ न करें बस घर पर रहे तो घर में एक रौनक सी रहती है हर तरफ खुशहाली, उत्साह, उमंग, अनुशासन, व्यवस्था सब जगह खुशनुमा माहौल रहता है। पर उनके नहीं रहने से घर में एक मायूसी सी छा जाती है, लगता है घर में सब कुछ है धन, दौलत, कार, बंगला, सबकुछ जो हमारी जिंदगी को आरामदायक बनाने में उपयोगी है, उसके बाद भी बहुत कुछ अधूरा–अधूरा सा रहता है। उस घर में जो रंगत रहती थी वो रंगत खो जाती है कहीं कुछ न कुछ कमी सी रहती है सब कुछ होने के बाद भी और कुछ कमी है तो वो 'पिता' है आज उनके न होने पर मैंने महसूस किया।

पिता जब रहते है तो किसी कि हिम्मत नहीं होती आपके घर के तरफ कोई गलत नजर से देखे, आपके घर के बारे में बच्चों के बारे में कोई कुछ कह सके, क्योंकि पिता एक 'छत्र' की तरह आपके घर की इज्जत, प्रतिष्ठा, सम्मान को बनाए रखते है। जो भी व्यक्ति इस घर की तरफ देखता था सम्मान की नजर से देखता या आज पिताजी नहीं है घर का मुखिया नहीं है हो सकता है आज घर को लोग उस सम्मान से देखे या फिर नहीं पर उसकी प्रतिष्ठा को बनाए रखना हमारा कर्तव्य है।

मैं एक बात और बताना चाहूँगा कि पिता के रहने से घर के निर्णय चाहे वह किसी भी कार्य से संबंधित हो, बहुत ही उचित और स्पष्ट होते है। जो सभी सदस्यों को सर्वमान्य होते है परंतु पिता के नहीं रहने पर आज भी निर्णय लिये जाते है, परंतु उस निर्णय पर घर के हर सदस्य की राय व मत अपना–अपना होता है, इसलिए वह निर्णय घर के सभी सदस्यों के मत को एकीकृत कर लिए जाते है जिसमें कभी–कभी मत एकता की कमी होती है जो अपने उचित निर्णय निधार्रण में बाधा उत्पन्न करते है। जिससे निर्णय कभी–कभी उचित व कभी–कभी अनुचित हो जाते है।

इसलिए हमें जरूरी है कि अपने पिताजी के बताए हुए सत्मार्ग का अनुसरण करें क्योंकि कहा जाता है, आदर्श व हमारे पूर्वज के अनुभव व उनके विचारों का अनुसरण किया जाए तो उचित निर्णय निर्धारण में मदद मिलेगी।

माता–पिता का प्रेम हमारे लिए अनमोल है माता का प्यार हमे दिखाई तो देता है परंतु पिता का नहीं पर हम यह भूल जाते है तालियाँ दोनों हाथों से बजती है। माता का प्रेम तो असीम है, परंतु पिता का प्रेम भी अतुलनीय है। बचपन से लेकर अभी तक पिता ने हमको वो सब देना चाहा जो उसका पुत्र उससे चाहता है। बचपन मे उसे जो खिलौने पसंद ये ट्रेन पिता ने उसे कही से भी हो, चाहे पैसा हो या न हो कही से भी उसे वह खिलौना लाकर दिया। हमारे अच्छे भविष्य के लिए उन्होंने अपने सपने, अपनी सेहत कुर्बान कर दी। पिता रोज नौकरी पर जाते वहाँ से थककर घर आते अपनी नींद चैन त्याग कर अपने काम मे लगे रहते है। क्योंकि वह अपने परिवार अपने बच्चों के लिए सब कुछ नौछावर कर देना चाहते है। उसे दुनियाँ की वह सारी खुशियाँ देना चाहते है। जिसके लिए अपने स्वास्थ की परवाह भी नहीं करता यह है पिता का प्यार जो हमें दिखाई नहीं देता पर वह अतुलनीय, प्रेम है जिसकी मुझे कदर करना चाहिये, हम सभी को करना होगा.....

सुपुत्र अंकुर सोनवानी
सिविल इंजीनियर

मेरी भावनायें



विजय जी असाधारण व्यक्तित्व, बहुमुखी एवं विलक्षण प्रतिभा के धनी, त्याग, दया, करूणा की प्रतिमूर्ति, जनमानस के प्रति मानवतावादी दृष्टिकोण रखने वाले, ओजस्वी, प्रखर बुद्धिजीवी, प्रेरणास्त्रोत, दिव्यविभूति, पथ प्रदर्शक महापुरूष की जीवनी पर प्रकाश डालने का हमारा प्रयास मात्र है। इस महान दिव्य आत्मा के लिये हम जितना भी लिखना चाहें, सूर्य को दिया दिखाने के समान है।

कई वर्षो से मेरे मन में विजय श्री के संर्घष मय जीवन पर प्रकाश डालने का विचार आया पर साहस न जुटा पाई। लेकिन इस निर्मम दुनियाँ से चले जाने के बाद जैसे में उनकी परछाई बनकर एक–एक पल को महसूस कर अपने हृदय के भावों को अनुपूरित शब्दों के माध्यम से जन–जन तक पहुंचाना चाहती हूँ। ताकि आने वाली पीढ़ियाँ भी उनसे प्रेरणा लेकर अपने जीवन को बिना माता–पिता व किसी सहारे के बिना जीवन में संर्घष करते हुये सफलता की ऊँचाईयों को छू सकें। और दूसरों को जीवनदान देने की प्रेरणा व मार्गदर्शक बन सकें। मेरा इस जन्म का सौभाग्य है कि मैं उनके संर्घषमय जीवन की संगनी बनी। मेरा जन्म तो उनके बिना अधूरा रहा। किन्तु ईश्वर से हर जन्म में उनका साथ माँगूगी। ताकि हर जन्म में एक नये महापुरुष के रूप में अवतरित हो और मैं उनकी अर्धागिनी के रूप में सभी का मार्गदर्शन करती रहूँ। हिन्दी साहित्य के अध्ययन से मैंने एक जीवन गाथा (जीवनी) लिखने का प्रथम प्रयास किया है। बड़े–बड़े साहित्यकारों के आगे मेरी रचना गौण है। फिर भी मन के भावों को व्यक्त करने का माध्यम व अथक प्रयास मात्र है। जो पाठकों के हृदय तक पहुँचने का एक संकल्प है। आशा है आप मेरी भावनाओं को उचित स्थान प्रदान करेगें।

श्रीमती इन्दु सोनवानी

प्रस्तावना

श्री विजय कुमार सोनवानी की जीवनी को उनकी बाल्यावस्था से प्रारम्भ करते हैं। इनके पिता का जन्म म.प्र. के मण्डला जिले के ग्राम ढ़ेकों में हुआ। पाँच भाईयों में इनके पिता का स्थान दूसरा था। साधारण एवं ग्रामीण परिवेश में ही रहकर बड़े भाई हेड मास्टर, इनके पिता जबलपुर जिले में शिक्षा ग्रहण कर जिलाधिकारी, कार्यालय मे क्लर्क थे। शेष तीन भाई कृषि कार्यो मे पिताजी के साथ जीवनयापन करते रहे।

जिला जबलपुर में पदस्थापना होने से विजय जी के पिताजी का विवाह भी शिक्षित माँ से मण्डला जिले के पास ही हो गया। वे कुशल ग्रहणी के साथ–साथ आर्दश शिक्षिका भी थी। उन्होंने विवाहोपरान्त दो पुत्रों को जन्म दिया। बड़े पुत्र का नाम सुभाष व छोटे पुत्र सोनवानी खानदान को रोशन करने वाली इस विलक्षण प्रतिभा ने 20 अक्टूबर 1954 दिन बुधवार को जन्म लिया। इनका नाम 'विजय' उर्फ मुन्ना रखा गया। ये उनका प्यार से रखा गया नाम था। साधारण परिवार था जीवन में खुशी के पल आये ही थे कि 5 वर्ष की अवस्था में ही किसी बिमारी के चलते माँ का देहान्त हो गया। बच्चों ने माँ का प्यार पाया भी नहीं और माँ की ममता से दूर हो गये। बिन माँ के बच्चों को किसी तरह पिताजी ने पाल पोस कर अकेले ही कठिन परिस्तिथियों में शिक्षा देकर बड़ा किया। वे अभी इंटर की परीक्षा पासकर स्वयं को गौरान्वित महसूस कर रहे थे, कि पिता ने ही माँ बनकर हमें हर परिस्थिति से लड़ना सिखाया है हमें उनके लिये जीना है। हमें विजय जी के बड़े भाई की शुरू से ही दिमागी हालत ठीक नहीं थी उनका मन भी किसी कार्य में नहीं लगता था। वे बचपन से ही न स्वंय पढ़ते थे ना ही' इन्हे पढ़ने देते थे। 5 वर्ष की आयु में ही माँ का स्वर्गवास होने पर पिता ने दोनों जिम्मेदारी सम्भाली तभी बचपन से ही संघर्ष की शुरूआत हो गयी। इनके ऊपर से माँ का साया उठते ही मातृत्व सुख से वंचित होना पड़ा।

इधर बड़े भाई की मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी। वे हमेशा ऐसे कुछ कार्य करते कि बने हुये काम भी बिगड़ जाते। उनकी मानसिक स्थिति के चलते पिताजी और ये हमेशा परेशान रहते। फिर पिताजी ने सोच विचार के उनका विवाह कर दिया कि विवाह के पश्चात् शायद ठीक हो जाये और परिवार की स्थिति भी सम्भल जायेगी। किन्तु विधाता को वो मंजूर नहीं था। भाभी को भी परेशान करते और घर में विवाद कर माहौल खराब कर देते इन्ही हालातों के चलते भाभी ने जुड़वा बच्चों को जन्म दिया उसी समय उच्च रक्तचाप के कारण प्रसव पीड़ा से स्ट्रेचर से गिरकर उनकी मृत्यु हो गयी और इस तरह ईश्वर ने इन से दूसरी खुशी भी छीन ली, ये अब फिर वही तीन सदस्य रह गये। परन्तु भाई की स्थिति में कोई सुधार न आया। इतने बड़े हादसे से गुजरने के बाद भी पहले से ज्यादा तंग करने लगे। पिताजी और ये उनकी हरकतों से

तंग आ चुके थे। उन्होंने सोचा ये अपने जीवन में कुछ नहीं कर पायेगा। छोटे बेटे को ही पढ़ा लिखा कर योग्य बनाया जाये। उन्होंने नौकरी के अलावा (ओवर टाइम) पार्टटाइम छोटा व्यवसाय कर छोटे बेटे को इंजीनियर बनाने का सपना देखा और उसे पूरा करने का हर संभव प्रयास किया वैसे तो वे बड़े बेटे को भी डॉक्टर बनाना चाहते थे किन्तु उनकी मानसिक स्थिति देख निराश हो गये। उन्होने छोटे बेटे को किसी तरह मेहनत करके इंजीनियरिंग कॉलेज में दाखिला दिलाया। वे बहुत खुश थे। उनका स्वप्न साकार होना प्रारम्भ ही हुआ था कि इंजीनियरिंग के द्वितीय वर्ष की पढ़ाई के वक्त उनके पिताजी का अचानक स्वास्थ्य खराब हो गया और 55 वर्ष की आयु में ही हमे अकेला छोड़कर इस निर्दयी दुनियाँ से चले गये। उनके स्वप्न अधूरे रह गये। ये विधाता ने विजय जी के साथ तीसरा क्रूर मजाक किया था। इनका एक मात्र सहारा भी इनसे रूठ गया।

विजय जी ने उसी वक्त हिम्मत व साहस के साथ ये संकल्प लिया, कि चाहे जो हो जाये मुझे उनके सपनों को पूरा करना है। उन्होने हमारे लिये पूरा जीवन समर्पित कर दिया। उन्होनें कभी दूसरे विवाह का विचार भी नहीं किया अकेले ही हमारी खुशियों के लिये जीवन से संघर्ष करते रहे उनके जीवन से प्रेरणा ले, इन्होने प्रण किया, उनके स्वप्नों को पूरा करने के लिये अपने कंधों पर जिम्मेदारी और दुखों का बोझ लिये जीवन से संघर्ष के लिये निकल पड़े, कहते है दुख में अपना साया भी पराया सा लगता है। ईश्वर जब परीक्षा लेता है, तो अपने भी बेगाने हो जाते है, किसी ने भी इनकी परवाह नहीं की चूँकि इन्हें बचपन से ही दुख सहने की आदत पड़ चुकी थी। इसलिये ईश्वर इनकी परीक्षा लेता रहा और ये संर्घष करते हुये परीक्षा देते रहे।

पिताजी की (अनुकम्पा नियुक्ति) बड़े भाई को इन्होने इसलिये दिलवा दी, ताकि वो अपना जीवन यापन करते रहे, और व्यस्त रहने के कारण उनकी मानसिक स्थिति भी ठीक हो जायेगी। किन्तु ईश्वर ने जैसे इन्हें अपनी परेशानी सहने के लिये ही बनाया था। ये चाहते तो पिताजी की नौकरी स्वयं कर सकते थे। लेकिन इन्हे तो अपने पिता का स्वप्न पूरा करना था। इसलिये विजय जी ने अपनी पढ़ाई कठिन और विपरीत परिस्थितियों में जारी रखी कुछ ही दिनों में भाई ने नौकरी भी छोड़ दी। और घर का सारा सामान एक–एक कर बेच दिया। पहले से ज्यादा परेशान करने लगे। तभी इन्होने उनकी दूसरी शादी कर उनको फिर से जीने की राह दिखाई और साथ में हमेशा उनकी आर्थिक मदद् करते रहे। उनका रिश्ता भाई से ज्यादा पिता–पुत्र का हो गया। जिनकी जिम्मेदारी इन्हे आजीवन निभानी थी। क्योंकि वो कुछ भी नहीं करना चाहते थे। ये छोटे–मोटे जो भी कार्य मिल जाये सभी कार्य को करते रहे। कठिन परिस्थितियों में किसी तरह फुटपाथ की रोशनी में पढ़ाई कर इंजीनियरिंग डिग्री प्राप्त की। किन्तु इनकी किस्मत थी कि जिसके लिये इन्होने इतनी लगन, कष्ट, मेहनत से सफलता पाई उसे देखने वाले इनके पिता इस दुनियाँ में नहीं थे। ये ना अपने आँसू और ना ही अपनी खुशी किसी से बाँट सकते थे। ना ही कोई इन्हे समझने वाला था।

विजय जी जब डिग्री लेकर कार्य की तलाश में भटक रहे थे। तभी इनका परिचय एक सज्जन, सहृदय अधिकारी 'बापट जी' से हुआ। उन्होंने विजय जी के कार्य से प्रभावित होकर इन्हे उनके मार्गदर्शन पर (भेड़ाघाट) विकाश प्राधिकरण मे दैनिक वेतन पे सबइंजीनियर के पद पर रख लिया। उनकी मेहरबानी से ये अपने कार्यो को पूरी ईमानदारी से कर उनके घर के कार्यो में भी हाथ बटाते और पूरा सहयोग करते। वे उनके कार्यो से प्रसन्न होकर उनका सहयोग करते व उनका प्यार पाकर विजय जी ने फिर स्वंय को सम्भाला और 'पी.एस.सी.' की तैयारी की और पहली ही बार मैं पिता के आशीर्वाद से परीक्षा उत्तीर्ण की और दमोह नगरपालिका में सन् 1983 में 'सहायक यंत्री' के पद पर नियुक्ति हुई। 2 वर्ष बाद विजय जी का सन् 1985 में ट्रांसफर छतरपुर नगरपालिका सहायक यंत्री के पद पर हुआ। 30 वर्षो बाद विजय जी को, ऐसा महसूस हो रहा था। जैसे उनकी परेशानी के दिन समाप्त हो गये। और विजय जी ने अकेले ही अपने जीवन के सबसे अहम फैसले के लिये संर्घष करना शुरू कर दिया। क्योंकि इनकी उम्र 31–32 वर्ष हो चुकी थी। और रिश्ते आना शुरू हो गये थे। उस समय 22 से 25 वर्ष शादी के लिये उचित माने जाते थे। अब वक्त था। जीवनसाथी के उचित चयन का उसमें भी विजय जी को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ा। किसी ने सच कहा है दुनियाँ मतलबी है। दुख के समय अपना साया भी अपना नहीं लगता। और सुख में सभी अपनी पहचान बनाकर ढूंढने चले आते हैं इनके बचपन से लेकर 30–31 वर्ष तक न अपनो ने न परायों ने ना समाज ने कभी नहीं पूछा कि ये किस हाल में है। 30 वर्षो तक असहाय, दुख, कष्ट, गमों के सहारे बीते पर विजय जी ने किसी से शिकायत नहीं की, शायद इसी का पारितोषिक ईश्वर हमें देना चाहता हो। यही सोचकर समय के साथ हाथ मिलाकर चलते रहे। विजय जी चाहते तो भाई को उसके हाल पर छोडकर किसी भी लड़की से विवाह कर सकते थे। इन्हें कोई रोकने टोकने वाला नहीं था। ना पारिवारिक बंधन ना ही सामाजिक मान्यताएँ फिर भी विजय जी को पिताजी से समय, संघर्ष, व परिस्थितियों से ऐसी शिक्षा मिली कि ये अपने जीवन को आदर्श व सादगीपूर्ण, साधारण व्यक्ति की तरह ईमानदारी से जीने की कला निभाते गये। नौकरी के पश्चात् विजय जी को एक ऐसा परिवार मिला जिसमें बड़े बुजुर्गो का सम्मान, मर्यादा संस्कारवान व सुशिक्षित मध्यवर्गीय सुखी परिवार का अपनापन मिला। उस परिवार की विशेषता थी, कि एक ही व्यक्ति की आय से सारा परिवार (15–20 सदस्यों) का शांति और सुख से रहता था। उनकी 5 बेटियाँ और 3 बेटे थे। बड़ी बेटी का विवाह हो चुका था। 1 से 3 न. की बेटी के बाद जो चौथे नम्बर की बेटी थी। उसे विजय जी मन ही मन पसंद करने लगे हालांकि ये एक तरफा प्यार था। वो इनकी पसंद वा प्यार से अनभिज्ञ थी। उससे बड़ी दो बेटियों की वजह से ये उसके माता–पिता से भी इस विषय में चर्चा करने में घबराते थे। पता नहीं वो इनके बारे में क्या सोचेंगे। वे सोचते थे इस घर में इनका आना जाना ही बंद न कर दें। क्योंकि वो बहुत ही सिद्धान्तवादी और उसूलों के पक्के थे। वे आर्दशवादी और बुद्धीजीवी, महानपुरुष थे। अपने वचन को निभाना जानते थे। फिर भी विजय जी ने हिम्मत कर

उनके बड़े पिताजी के बड़े बेटे (संतोष) को इस चर्चा के लिये माध्यम बनाया, हालाकि उस घर में सभी चाचाजी की इज्जत व सम्मान के आगे खौफ खाते थे। उन्हें मनाना टेढ़ी खीर थी पूरे घर में उन्ही का शासन चलता था। उनकी ईमानदारी और प्रतिष्ठा पूरे समाज मैं फैली हुई थी। वे नेक दिल इंसान के साथ न्याय प्रिय व अनुशासनप्रिय थे। अपने से बड़ो का आदर करते थे। पर गलत बात बर्दाश्त नहीं करते थे। चाहे जो भी हो।

अब भतीजें से बड़ी माँ 'अम्माजी' द्वारा इस बात की जानकार पिताजी को मिली, तो उनका विरोध और निर्णय विजय जी की इच्छा के विपरीत था और होता भी क्यों नहीं वे एक आदर्श, न्यायवादी पिता थे। अपनी दो बड़ी बेटियों को छोड़कर छोटी बेटी से रिश्ता कैसे स्वीकार करते उनकी जगह कोई भी पिता होता तो यही करता।

परन्तु उस समय विजय जी ने साहस से उनका सामना कर उन्हें सच बताकर अपने पिता की दोस्ती का वास्ता दिया। क्योंकि इनके पिता और मेरे पिता समाजिक रूप से पूर्व परिचित थे। वो बातों–बातों में ये भी कहा करते थे कि तुम्हारी 5 बेटियाँ है, और मेरे दो बेटे, मेरी इच्छा है तुम्हारी एक बेटी को लेकर अपने घर की शोभा बढ़ाना चाहता हूँ। और वो असमय ही दुनियाँ से चले गये। उनकी यही इच्छा को आपके सामने रखता हूँ। और ये भी वादा करता हूँ आपकी दोनों बेटी का विवाह भी मेरी जिम्मेदारी होगी। क्योंकि ये बिलकुल अकेले पड़ गये और इनके रिश्ते भी बहुत आ रहे थे जो इन्हें स्वीकार्य नहीं थे। अतः मैं आपको अपना पिताजी स्वरूप मानकर ये निवेदन कर रहा हूँ। आगे आप स्वंय समझदार है। यदि आपकी आज्ञा हो, तो ही शादी होगी वरना नहीं। पता नही कौन सी शक्ति थी, कि साहस से इतना बोल दिया।

पिताजी इनकी स्पष्ट और सच्चाई व जिस सज्जनता के साथ कही गई बात से इतना प्रभावित हुये कि, गम्भीरता से विचारकर उन्होने विवेकपूर्ण निर्णय लिया। जो परिवार और समाज के लिये एक मिशाल बन गया। परिवार वाले भी हतप्रद थे। कि चाचाजी राजी कैसे हो गयें। इन सभी बातों से अनभिज्ञ उनकी बेटी की उम्र उस समय मात्र 17 वर्ष थी जो ग्यारहवीं बोर्ड की परीक्षा पास कर कॉलेज की तैयारी कर रही थी। पढ़ने में होशियार होने के साथ ही, उसमें नादानी और बचपना था। जब उसके कान में विवाह की बात आई तो उसने अपनी बहनों का वास्ता देकर विवाह का विरोध किया, और जायज भी था, कि बड़ी बहनों के होते हुये। वो कैसे इतनी शीघ्र शादी के बंधन में बंधना चाहेगी। किन्तु पिता की आज्ञा और उनके उसूलों की मर्यादा का पूरा ज्ञान था। वो जो करेंगे अच्छा ही करेगें। उनका फैसला मानकर इनका विवाह मेरे साथ तय कर दिया गया।

शायद ये इनके पिताजी का आशीर्वाद था। जो आज फलीभूत हो रहा था। उनके पिता के रूप में इन्हें मेरे पिता नजर आ रहे थे। इस तरह इनका विवाह 12 मार्च 1986 को खुशी–खुशी सम्पन्न हुआ। उस समय ये स्वयं को दुनियाँ का सबसे खुशकिस्मत

इंसान समझ रहे थे। जिसे मेरे पिता ने आसानी से पूरा कर दिया। शायद वो विजय जी के संघर्षशील 25–30 वर्षो और माँ–पिता से वंचित होते हुये, भी विजय जी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर अपना दामाद ही नहीं, बेटे का दर्जा दिया। विजय जी में अपने भविष्य के सपनों को साकार करने की क्षमता देखते थे। उन्हें विजय जी पर विश्वास था। वे मेरी बेटी का ही नहीं पूरे परिवार के लिये सदा सुरक्षा कवच बनेगें, क्योंकि उनके तीनों बेटे मुझसे छोटे थे। जो उम्र के साथ ना समझ और मासूम थे।

विजय जी अपने नये जीवन की शुरूआत छतरपुर जिले से की जहाँ महाराना छत्रशाल की नगरी मे 28 अक्टूबर 1987 को प्रथम पुत्री लक्ष्मी रूप में प्राप्त हुई। जिनका नाम हमने खुशी से 'गुडलिन' जूही रखा 2 वर्ष पश्चात् 31 जनवरी 1989 को जबलपुर में प्रथम पुत्र रत्न की प्राप्ति होने पर हमारी खुशी दुगनी हो गई। इसी तरह हम सोच रहे थे, परिवार मे कम से कम 4 बच्चे हो दो बेटे दो बेटी, क्योंकि हम भाईयों के बीच सिर्फ दो ही बच्चे थे। 18 दिसम्बर 1990 में दूसरे पुत्र रत्न की प्राप्ति भी जबलपुर में हुई, हम बहुत खुश थे। पर पत्नी के स्वास्थ्य के वजह से हमने ऑपरेशन का निर्णय लिया, जो हमारे लिये जल्दबाजी व घातक सिद्ध हुआ। उसी के बाद 1992 मे तीसरी संतान यश कुमार योग्य डॉ. ना होने की वजह (लीवर) से पीड़ित होने पर हमें छोड़ कर चला गया। हमारे परिवार की खुशियों को पता नहीं किसकी नजर लग गई इनकी पत्नी के लिये तो पहला सबसे बड़ा दुख था और इन्हे तो जैसे दुख सहने की आदत हो गयी थी। पत्नी की मानसिक स्थिति को देखते हुये। विजय जी ने (अपने साले) अनिल को साथ रख लिया। ताकि पत्नी का मन लगा रहे। भाई को भी ठेकेदारी के कार्य में लगा दिया। विजय जी ने पत्नी के कहने पर छोटे बेटे के नाम से सिरोंज में शिवमंदिर का निर्माण कराया। और 5 वर्ष बाद सिरोंज से पुनः छतरपुर ट्रान्सफर हो गया। छतरपुर पूर्व परिचित होने पर वहाँ कार्य करना ज्यादा आसान था और सभी का सहयोग भी भरपूर मिला। सभी वर्ग के लिये इन्होंने निस्वार्थभाव से बड़े–बड़े कार्य किये ये सोचते थे कि जब ईश्वर ने मुझे उस लायक बनाया है। कि मैं सभी के कार्य को सफल बना सकूँ। तो फिर मैं क्यो न करूँ। विजय जी के नेक कार्यो से प्रसन्न अधिकारी और कर्मचारी इन्हें विशेष सम्मान देते थे। सफल 2 वर्ष रहने के पश्चात् छतरपुर से सागर संभागीय कार्यालय में इनका कार्यपालन यंत्री पदोन्नत होकर नगरीय प्रशासन में स्थानान्तरण हो गया।

इसी बीच विजय जी के पिता स्वरूप ससुरजी रिटायर होते ही बीमार रहने लगे। वे राज्य परिवहन में परिचालक थे। 59 वर्ष की अवस्था में ही उनका निधन हो गया। उन्होंने अंतिम बार अपने परिवार की जिम्मेदारी विजय जी को सौंपते हुये कहा, तुम मेरे बड़े बेटे हो, मुझे पूरा विश्वास है, तुम वादा पूरा करोगे। बस उसी क्षण इन्होने उनके चरण स्पर्श कर आशीर्वाद लेते हुये संकल्प लिया और उसे पूरा किया उनकी प्रेरणा से इन्होने जीवन मे कभी हार नहीं मानी जिस कार्य को हाथ में लिया उसे पूरा करके ही दम लिया।

कथन– उनका ये डॉयलाग अमर हो गया (असंभव शब्द मेरी डायरी में है ही, नहीं) अपने साथ साथ सभी का भला चाहते थे। सभी को आगे बढ़ने की प्रेरणा देकर उन्हें सहयोग प्रदान करते जिसके कारण सभी उन्हें (सबका मालिक एक) कहा करते थे।

घर परिवार, कर्मचारी, अधिकारी, असहाय बेरोजगार जिसने भी मदद् माँगी उसे पूरा किया। अपने पद का सदुपयोग करते हुये अपने अल्पकाल के जीवन मे इतने परोप कार किये जिसकी गिनती नहीं कन्याओं का विवाह से लेकर शिक्षा दीक्षा, नौकरी किसी भी तरह की मदद् के लिये सदैव तत्पर रहते थे। मंदिर बनाने के पश्चात् उन्होंने सबसे पहले अपने बड़े भाई के लिये हाऊसिंग बोर्ड का मकान बनवाकर दिया ताकि वो स्थायी व सुकून से रह सके। '1998 से 2014' लगभग 18 वर्ष तक सागर संभागीय कार्यालय में कार्यपालन यंत्री के पद पर रहते हुये। उनका हृदय सागर की तरह महान व शान्त हो गया था। उनका उद्देश्य सदा यही रहता था कि सबको खुश रखूँ।

कथन:– मेरे द्वारा किसी को कष्ट न पहुंचे यही कोशिश करता हूँ। वो एक महान विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। उन्हें ईश्वरीय देन यी कि होनी–अनहोनी का पूर्वाभाष हो जाता था। बचपन में माता और युवावस्था में पिता के प्रेम से वंचित होने पर भी सभी को माँ बाप के प्यार और अपनेपन की शिक्षा देते रहे। दफ्तर के कई कर्मचारी और उनके बच्चों का जीवन धन्य किया, वे तो उनको अपना जीवनदाता और साक्षात अवतार पुरूष मानते थे, उन्होने अनगिनत का उद्धार किया। जो उन्हें भी याद नहीं रहता था, लेकिन जब वो लोग धन्यवाद देने आते ये कि साहब तो हमारे लिये ईश्वर से कम नहीं। उन्होने हमारी जिन्दगी बना दी हम नहीं भूल सकते। तब उन्हें याद आता था। वो परोपकार कर भूल जाते थे। ये महान गुण था।

वे सदा अकेले मातृत्व और पिता के प्रेम व आशीर्वाद से वंचित रहे। उन्हें हर पल इस बात का अहसास व आभाव महसूस होता था। काश आज मेरे माता–पिता होते और मुझे इतनी ऊँचाई पर व सुखी देखकर स्वयं को कितना धन्य व भाग्यशाली समझते उनकी खुशियाँ आसमान छूती। ये सोचकर बैचेन हो जाते थे आज इतने संघर्ष के बाद ईश्वर ने सब कुछ दिया पर उन्हें देखने वाली आँखे नहीं हैं। फिर एक पल के लिये मेरी आत्मा की आवाज सुनकर, मैं अपने जीवन के कटु अनुभव और आभावो से भरे संघर्षशील जीवन का प्रभाव अपने बच्चों और पत्नी व परिवार पर छाया भी न पड़े, यही सोचकर उन्होने अपने पारिवारिक जीवन को सदैव सारी खुशियाँ, सारी सुविधायें, माता पिता का प्यार व आशीर्वाद से भरपूर रखा। जो उनके जीवन में अभाव व कमियाँ थी। उनके परिवार को उनकी परछाई भी न छू पाये। वे सोचते अपनी वो हर खुशी उनमें देखूँ। जिससे मैं 30 वर्षो के जीवन से वंचित था। वे दुनियाँ की हर खुशी अपने परिवार को देना चाहते थे, और उन्होने ईश्वर की कृपा से मेहनत को फलीभूत होते देखा और महसूस किया लेकिन अपने संघर्ष के दिनों को भूले नहीं वरन् हर पल अपने बीते दिनों की यादों से सभी को प्रेरणा लेने के लिये प्रेरित करते रहे, क्योंकि सोना आग

मे तपकर ही निखरता है वैसे ही मनुष्य का जीवन है। सुख दुख एक दूसरे के पूरक है, जिस तरह प्रत्येक काली रात के बाद 'सूर्य' का उजाला होता है। यदि मनुष्य जीवन के इन दोनों पहलू को समझ ले तो उसका जीवन सफल बन जाये। बस अंतर यही है, सुखो के पल शीघ्र निकल जाते है और दुख के वही पल कठिन होते है।

वक्त गुजरता गया समय पंख लगाकर उड़ता रहा और हम सभी उसके प्रवाह में बहते रहे। दोनों बच्चों की शिक्षा 12वीं तक (सागर के सी.बी.एस.ई) स्कूल से पूर्ण होने पर, इनके पिता का स्वप्न था, कि एक बेटे को डाक्टर व एक बेटा इंजीनियर हो उनका एक सपना तो विजय जी ने पूरा कर दिया दूसरा बड़े भैया ने पूरा होने नहीं दिया विजय जी ने यह सपना अपने बच्चों द्वारा पूरा करना चाहा। संयोग से हमारी सुपुत्री ने एक बार में (पी.एम.टी.) परीक्षा पास कर ली। इन्हें पूरा विश्वास था वो मेरे पिताजी का स्वप्न जरूर पूरा करेगी और काफी मेहनत और लगन से उसने (पीपुल्स मेडिकल कॉलेज) भोपाल से (एम.बी.बी.एस.) किया। और बेटे ने भी भोपाल (एल.एन. सिटी) कॉलेज से (बी.ई.सिविल) इंजीनियरिंग की डिग्री प्राप्त किया।

विजय जी किसी भी कार्य को करने के पूर्व अपने ईष्टदेव (माँ जगदम्बा) से आशीर्वाद जरूर लेते थे। उनके मन में ये प्रेरणा हुई। कि माता रानी की कृपा से मेरा जीवन सफल हुआ, क्यों न उनकी सेवा के लिये एक मंदिर की स्थापना करूँ। ताकि मेरे साथ सभी को उनकी कृपा और आशीर्वाद मिले। इस तरह ईश्वरीय प्रेरणा से माँ का भवन तैयार हुआ। संयोग से उनकी पत्नी यानी मुझे भी माँ सरस्वती का वरदान प्राप्त था। मैं माँ की सेवा पूरे तनः मन, धन और अपनी मधुर वाणी से करती थी व भजन स्वयं बनाती व गाती थी। संगीत में मेरी रूचि थी घर, परिवार के साथ–साथ मैं सभी कार्यो में दक्ष थी।

इसी बीच बच्चों के साथ–साथ मैंने भी अपनी शिक्षा जारी रखी, छतरपुर से 12वीं से प्रारम्भकर सागर के डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय से मैने (बी.ए.) उत्तीर्ण की फिर (एम.ए.) किया पुनः प्रथम श्रेणी में आने के लिये मैने हिन्दी साहित्य में (डबल एम.ए.) किया मेरी हिन्दी साहित्य और लेखनी से वे बेहद प्रभावित थे। पत्नी की परिवार के प्रति जिम्मेदारियों को निभाते हुये अध्ययन करना बड़ें गर्व की बात लगी लेकिन उन्होने जीवन की सारी उपलब्धियों का श्रेय सदा मुझे ही दिया ये उनके आदर्श व ऊँचाई की पहचान थी, उनका ये मानना था कि ये मेरी पत्नी के संस्कार थे जो मेरे घर को स्वर्ग बनाने के लिये काफी थे। इस तरह सागर में प्रेम का सागर बनकर 18 वर्ष बीत गये। भोपाल में बच्चें उच्च शिक्षा के लिये आ गये। सागर में हम दोनों ही रह गये। लेकिन समाजिक कार्य, धार्मिक कार्यो में व्यस्त रहते हुये। 2010 में सागर के मंदिर में शनिदेव की स्थापना की ।

सन् 2011 में भोपाल मे बच्चों के अध्ययन के लिये सिद्धार्थ लेक सिटी में मकान लिया संयोग से 12 मार्च 2011 को हमारी शादी की 25वीं वर्षगांठ थी। और उसी दिन

हमने गृहप्रवेश भी रखा। ताकि इसी बहाने वे अपनी जीवन संगिनी को ये तोहफा दे सके। उनका मानना था कि उसने जो मुझे 32 वर्ष की जिन्दगी दी, उसके आगे ये तोहफा कुछ ना था। फिर भी मैं उसे जीवन की हर खुशी देना चाहता था तीसरी बड़ी सफलता ये थी कि बेटे की 11 नवम्बर 2011 में जिला पंचायत भोपाल में भोपाल सब इंजीनियर के पद पर नियुक्ति हुई। आगे चल कर 30 अक्टूबर सन् 2014 को इनका 32 वर्षों से सफल कार्य काल पूर्ण होकर, सेवानिवृत्त का दिन भी आ गया। सागर संभाग में लगातार 18 वर्षों तक एक पद पर बने रहने का नगरीय प्रशासन का रिकार्ड बन गया। इनके समक्ष 8–10 (डिप्टी डायरेक्टर) उपसंचालक आये और आकर इनके कार्य से प्रभावित होकर चले गये। विजय जी ने कार्यालय के बड़े से लेकर छोटे सभी वर्ग का प्यार पाया। आज भी सागर संभाग और भोपाल, जबलपुर संभाग में श्री सोनवानी जी का नाम श्रद्धा और सम्मान के साथ लिया जाता है।

2014 में सेवानिवृत्ति के पश्चात् विजय जी का भी भोपाल आगमन हो गया वे अपने परिवार के बीच बहुत खुश थे। मेरी बेटी ने (एम.बी.बी.एस.) कर उज्जैन के (आर.डी. गार्डी) मेडिकल कॉलेज से (पी.जी.) शिशुरोग विशेषज्ञता हासिल की। अब हमे उसके विवाह की चिन्ता संताने लगी। ये अपने स्वास्थ्य को देखते हुये। उसका शीघ्र विवाह करना चाहते थे, ताकि समय पर अपनी जिम्मेदारी पूर्ण कर सके। हमारे समाज में लड़कों को ज्यादा व लड़कियों को कम शिक्षा का अंतर से देखा जाता था, हमें अपनी बेटी के समकक्ष लड़का मिलना मुश्किल था। हम समाज से बाहर भी रिश्ता नहीं कर सकते थे, सामाजिक बंधन व मान्यताओं के चलते हमने काफी प्रयासों से बिलासपुर संभाग में डॉक्टर लड़का मिला, जो कवर्धा जिले के बोड़ला तहसील के रहने (निवासी) वाले थे। सामान्य परिवार और सुशील सर्वगुण सम्पन्न बेटे में हमें अपनी लाड़ली बेटी का भविष्य नजर आया, और हमने सन् 2015 मार्च को धूमधाम से विवाह कर दिया। विवाह भी समाज और गैर समाज के लिये मिशाल बन गया। सन् 2011 में बेटे को जिला पंचायत मैं सरकारी नौकरी मिलने के बाद से ही हम उसके विवाह के लिये प्रयासरत थे, लेकिन बेटे की उम्र मात्र 22 वर्ष थी। उसके कंधों पर इतनी जल्दी इतनी बड़ी जबावदारी नहीं देना चाहते थे। एक कारण और था बेटा और ये इस नौकरी से संतुष्ट नहीं थे। हम (डिप्टी कलेक्टर) या राजस्व विभाग के उच्चपद के लिये संर्घष कर रहे थे पी. एस.सी की तैयारी के लिये ये उसे सदैव मार्गदर्शन देते रहते थे, बीच में रिश्ते की तलाश भी जारी थी। इसी बीच 2 मार्च 2017 को (श्री सुंधाशु श्री महाराज) गुरूदेव का तीसरी बार घर पर आगमन हुआ। हम सभी प्रसन्न थे कि गुरूदेव के आशीर्वाद से बेटे का विवाह भी सम्पन्न हो जाये। 22 मार्च 2017 को ही मेरी बेटी ने एक प्यारी सी कन्या को जन्म दिया। जिसका नाम हमने अपने परिवार के सभी नामों से मिलाकर (ओजस्वी) रखा हम नाना–नानी बनकर बड़े प्रसन्न थे। 10 मई को नातिन के जन्मोत्सव कार्यक्रम में शामिल होकर हमने फैसला किया। वहीं से (रायगढ़ जिले से) रिश्ते को बेटे के साथ मिलकर पक्का कर देगें। किन्तु वहाँ जाकर बात नहीं

बनी। बेटे ने असहमति दिखाई फिर भी हम कोशिश करते रहे। उसी बीच जुलाई माह में 2 शादी मे हम जबलपुर गये, वहाँ से लौटने पर। इनका स्वास्थ्य अचानक खराब हो गया। गैस बनने पर शरीर में भारीपन महसूस होने पर हम सभी के ना चाहने पर भी इन्होने आयुर्वेदिक दवाओं का सेवन कर लिया कि इस से गैस बनना बंद हो जायेगा।

अगस्त 7 ता. को रक्षाबंधन था हमने 7 ता. को ही रायपुर जाने का प्लान बनाया था। पर होनी को कौन जानता है रात में श्वांस लेने में तकलीफ होने पर हमने सुबह 6 बजे बंसल अस्पताल ले गये सोचा बड़ा अस्पताल है जल्दी आराम मिलेगा जाते ही उन्होने ऑक्सीजन और फिर वेंटीलेटर पे कर दिया। 15 अगस्त को पुनः ऑक्सीजन पे रखा गया। हमने सोचा हम जीत गये, उन्हें जल्दी घर ले आयेगे। लेकिन दूसरे दिन पुनः (वेंटीलेटर) पर कर दिया गया, इससे हम घबरा गये।

फिर यहाँ से दिल्ली ले गये जहाँ फेफड़े के इन्फेक्सन का इलाज हो सकें। हम एयरएम्बूलेस से दिल्ली ले गये। जहाँ 2 दिन के इलाज के बाद उनका निधन हो गया। मंगलवार 22 अगस्त 2017 को ही हो हम सभी को बिलखता छोड़ इस दुनियाँ से अंतिम विदाई ली। हमारे परिवार की आन, बान, शान और जैसे जान भी चली गई। हम अकेले रह गये वो हम से अपने अंतिम शब्द भी नहीं कह पाये। खैर इन पलों को याद करना भी मुनासिब नहीं। बस उनकी अंतिम हसरत हम पूरी नहीं कर पाये उनके बेटे का विवाह व उसे उच्चपद पर देखने की महत्वाकांक्षा जो हमें आजीवन कचोटती रहेगी जो हर पल हमें रूलायेगी, तड़पायेगी। आज जिन्दगी भर जिसने अकेले जीवन से संघर्ष कर सभी को सिर्फ खुशियाँ बाँटी सुख ही सुख दिया है। हम उसकी एक आरजू भी पूरी ना कर पाये उनके त्याग, बलिदान व कर्म व जीवन के बारे में जितना भी कहा जाये, सूर्य को दीपक दिखाने के सामान है। आज हमारे बीच से जगमगाता सितारा तो (विलुप्त) हो गया। लेकिन अपनी आर्दश की रोशनी से सभी को रोशन कर गया। उनका सिद्धान्त था होनी अनहोनी निर्धारित है उससे डरकर नहीं, उसका सामना करते जीना ही जीवन की सफलता का सूत्र है। जाना तो एक दिन सभी को है। पर कुछ ऐसा नेक कार्य कर जाओ कि दुनियाँ सदैव तुम्हारा अनुकरण कर तुम्हें याद रखें। एक महापुरूष के जाने का गम क्या हो ता है। ये एक परिवार ही नहीं समाज पूरी दुनियाँ के लिये अपूर्णीय क्षति होती है जो सदियों तक स्मरण की जायेगी। उनके लिये फिल्म की कुछ पक्तियाँ समर्पित :–

गीत– अपने लिये जिये तो क्या जिये, तू जी ऐ दिल जमाने के लिये।

गीत – मैं जिन्दगी का साथ निभाता चला गया व.....

गीत – जिन्दगी के सफर में गुजर जाते है जो.....

गीत – हम लाये है तूफान से किश्ती निकाल के इस...

गीत– जीना यहाँ, मरना यहाँ इसके सिवा जाना कहाँ..

विजयपथ एक महापुरुष की जीवनी लिखने का प्रयासमात्र है, पता नहीं इसमें कितनी त्रृटियाँ अनजाने में हो गयी है। मेरा अपने प्रिय पाठकों से निवेदन है लेखिका की त्रुटियों को संशोधित कर पाठन योग्य कर पढ़ने का प्रयास करें। इन्दुजी ने अपनी लेखनी से (विजयपथ एक महापुरूष) जीवनी को अपने अन्तर्मन के गंभीर मर्मस्पर्शी, सहनशील, प्रेरणामयी, विचारों से ओतप्रोत, भावपूर्व, ओजपूर्ण, जीवन को जिन शब्दों की माला में पिरोया है वह साहित्य की दृष्टि से अद्‌भुत हैं, उन्होंने अपने पात्र के साथ पूरा न्याय किया है। उनकी साहित्य रचना अलग विषय की ओर पथ प्रदर्शित करने में अग्रसर है। उनकी भाषा शैली, साधारण शब्दों का चयन, सरल और हर वर्ग को बार–बार पाठन योग्य बनाती है।

महापुरूष कभी मरते नहीं बल्कि अमर हो जाते है। सदियों तक लोगों के दिलों मे राज करते है।

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः।

न चैनं क्लेदयन्त्यापो, न शोषयति मारूतः ।।

वे अपने सिद्धांतों विचारों और नेक कार्यो से सदैव अनुकरणीय व प्रेरणास्त्रोत बन जाते है। जो नयी पीढ़ी के लिये मार्ग दर्शक होते है। इस मायारूपी संसार मे जो भी आया राजा हो या रंक सभी को एक दिन जाना ही है। फिर भी इंसान ऐसे जीता है जैसे वो अमर है ओर मृत्यु जैसे सत्य को नहीं स्वीकारता (समझता) कि उसे जो अमूल्य जीवन मिला है उसे जीना कैसे है, पूरा जीवन समाप्त हो जाता है पर नहीं समझ पाता इसका रहस्य। जिन्होने इस रहस्य के राज को जान लिया, वही तो सच्चे अर्थो में महापुरूष है। वे महाज्ञानी है अवतारीपुरूष है। ये हमारे संस्कार और संस्कृति की अमूल्य धरोहर है। यदि दुनियाँ में महापुरूष की जीवन गाथा, समय परिवर्तन के साथ प्रस्तुत न होते हमारे सामने उनके जीवन के उदाहरण न दिये जाये। तो हमारी जो पीढ़ियाँ किससे शिक्षा ग्रहण करेगी? क्या प्रेरणा लेगी? किसका अनुकरण करेगी? कैसे सात्विक विचार बौद्धिक स्तर, दृढ़, निश्चय निष्ठावान, और संकल्पवान कैसे बनेगी ?

इसलिये हर युग मे महापुरुषों की जीवनी, उनका संर्घष प्रेरण बनकर हमारी आने वाली हर पीढ़ी के लिये सदैव पथ प्रदर्शक रहेगा जीवन की सार्थकता के लिये ये अति आवश्यक है, इनके आभाव में हमारा जीवन निर्थक और गौण हो जायेगा।

अतः हमें इनका अनुकरण और प्रेरणा लेकर अपने जीवन को सफल और सार्थक बनाने का प्रयास अवश्य करना चाहिये। अपने जीवन को महापुरूषों के उच्च आर्दशों से सुसज्जित कर उनके पथ पर चलने का प्रयास करे। तभी वीर महापुरूषों की क्रम से निरन्तरता और परम्परा आगे बढ़ते रहेगी। और महापुरूषों से परिवार समाज, राज्य, देश, दुनियाँ मे नाम उनके नामों से लिया जायेगा। मुझे विश्वास है कि विजयपथ आगे

आने वाली पीढ़ी के लिये पति स्वः श्री विजय जी के संपूर्ण जीवन यात्रा के अनमोल पलो को पढ़कर अवश्य लाभान्वित होगी।

न जायते म्रियते, वा कदाचिन्
नायं भूत्वा भविता, वा न भूयः ।
अजो नित्यः, शाश्वतोडयं पुराणो
न हन्यते, हन्यमाने शरीरे ।।

अविस्मरणीय पल और संस्मरण

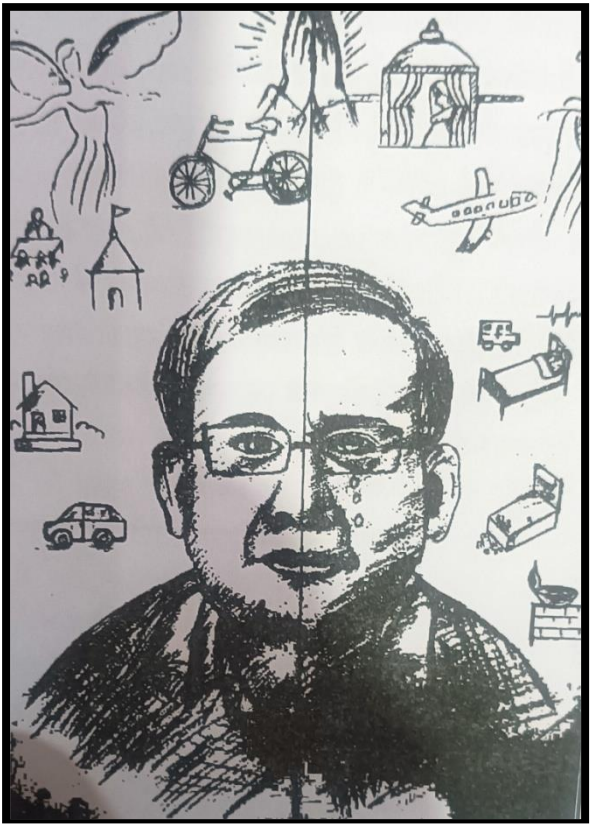

रेखा चित्र
अनुभा टान्डिया

चित्रांकन
अंकुर सोनवानी

अविस्मरणीय पल और संस्मरण

32 वर्ष के सफल दाम्पत्यजीवन में यूँ तो अनेक खट्टी मीठी स्मृतियाँ है। उनमें से कुछ अविस्मरणीय स्मृतियाँ जो मेरे मन मंदिर और हृदय आँगन में गहरी छाप छोड़ गयी। मैं उन्ही स्मृतियों के सहारे अपने शेष जीवन को व्यतीत कर रही हूँ। उनके बगैर जीना तो दुश्वार है ही। उनकी सुनहरी स्मृतियों के बिना जीना और अधिक दुष्कर है, विजयजी के असमय जाने के बाद कल्पना भी नहीं की थी जीने की। शायद एक मात्र सम्बल उन्होंने जैसे मेरी नातिन 'ओजस्वी' के रूप में मेरी गोद में छोड़ गयें कि ये तुम्हारे जीने का सहारा बनेगी। तुम उसके पालन–पोषण और उसके बालमनुहार से अपना शेष जीवन व्यतीत कर सकोगी। यदि मैं उनकी तस्वीर की ओर भी देखती हूँ तो मुझे वो अपनी तोतली भाषा मे हिदायत देती है, नानी रोना नहीं वरना मैं भी रोने लगूंगी और प्यार से गले लग जाती है जैसे उनका ही रूप हो और में निरूत्तर हो जाती हूँ।



पहला संस्मरण
मन्दिर निर्माण का संकल्प

बात उन दिनों की है कि जब हमारी तीसरी संतान (छोटू) योग्य डॉक्टर ना होने की वजह से सिरोंज तहसील में लीवर की बीमारी के चलते 2 वर्ष की आयु में ही हमें बिलखता छोड़ गया। उस समय मेरी उम्र लगभग 25–26 वर्ष थी। मेरे जीवन का पहला दुख का पहाड़ बनकर टूट पड़ा। और मेरी मानसिक स्थिति प्रभावित होने लगी। उन्होंने स्वयं को और मुझे बड़ी मुश्किलों से संभाला। विदिशा जिले की सिरोंज तहसील में मुस्लिम समुदाय की बहुलता के कारण वहाँ मात्र एक ही मंदिर जटाशंकर था, जो शहर से काफी दूरी पर था। घर से लगभग 2 कि.मी. हम दोनों रोज वहाँ टहलते और बच्चों को स्कूल छोडने जाते रोज आते–जाते मेरे मन में एक विचार आया। कि यहाँ चबूतरा खाली पड़ा है और कुछ असमाजिक लोग उस पर बैठकर उसका दुरूपयोग कर रहे है। उस चबूतरे में एक पत्यर की जीर्ण शीर्ण मूर्ति रखी थी। कोई उस पर ध्यान न देता। मैंने इनसे अपने मन की बात कही क्यूँ ना हम इस चबूतरे को मंदिर बनवा दे। और बेटे के नाम से शिवजी का मंदिर बनवा दें, ताकि पूरे सिरोंजवासी उसका लाभ उठा सकें। और बेटे को इस तरह से याद कर अमर बना देगें। इन्होने मेरी बात पर विचार कर अगले ही दिन उस स्थान की नगरपालिका से स्वीकृति ली और निर्माण कार्य प्रारम्भ कर दिया। और 6 माह में शिव मंदिर बनकर तैयार हो गया। क्योंकि वहाँ एक भी मंदिर नहीं था। सारी जनता सिरोंजवासी, हमें आशीर्वाद देते कि आपने बहुत उत्तम कार्य किया। हर वर्ष शिवरात्रि को हम अभिषेक करने सपरिवार सिरोंज जाते और बेटे के नाम से अभिषेक करते ये सिलसिला 30 वर्षों से निरन्तर चल रहा है। फिर इन्होनें सोचा हम जहाँ भी रहेंगे। घर हो न हो पर एक मंदिर जरूर बनवाएंगे और हम जहाँ भी रहे वहाँ मंदिर की स्थापना की इस तरह इन्होने 5 मंदिर बनवाये और पुजारियो को नियुक्त कर रोजगार दिया और उन्हें ही सौंप दिया।

1. शिव मंदिर सिरोंज
2. मातामंदिर छतरपुर में
3. सागर में देवीजी की स्थापना
4. शनि मंदिर सागर
5. भोपाल के निवास में गणेश मंदिर

छठवाँ मंदिर संस्कारधानी जबलपुर में राधाकृष्णजी का बनवाना चाहते थे। उनकी इच्छा थी हम दोनों की जन्मस्थली माँ नर्मदा की नगरी में जीवन के शेष पल साथ रहेगे। पर शायद ईश्वर को मंजूर नहीं था। उनके आर्शीवाद से बच्चे उनका अधूरा सपना जरूर पूरा करेंगे।

दूसरा संस्मरण
परोपकार एंव सेवा भावना

बात उन दिनों की है जब 27–28 वर्ष पूर्व सिरोंज से पुनः छतरपुर ट्रान्सफर होने पर हम खुश थे। कि (12 मार्च 1986) को विवाह के बाद मैं पहलीबार छतरपुर दुल्हन के रूप में आई थी।

पुरानी सुनहरी यादों के साथ मुझे यहाँ अपनेपन का अहसास होता था। इन्हें भी पूर्व परिचित अच्छे कार्यो की वजह से पुनः छत्तरपुर अधिकारियों, कर्मचारियों की अनुशंसा पर बुलाया गया। उस समय भर्तियाँ व्यापम से न होकर मुख्य नगरपालिका अधिकारी उनके प्रभारी सहायक यंत्री द्वारा की जाती थी। पहले जो कर्मचारी दैनिक वेतन पर (मस्टर) 5 या 10 वर्ष तक सेवा देते थे। उन्हें नियमित कर दिया जाता था जो बहुत सरल और आसान प्रक्रिया थी। ना हीं कोई विशेष योग्यता ना ही, पैसों की समस्या। नौकरी मिलना बहुत आसान थी। जो आज की सबसे बड़ी (बेरोजगारी) जटिल समस्या है। उस समय इन्होने जितने भी अस्थायी कर्मचारी थे, उन्हें स्थायी नियुक्ति दिलायी। बिना कोई स्वार्थ और लालच के। इनके प्रशासन की ये विशेषता थी, कि इनके कार्यों से सभी प्रभावित और संतुष्ट रहते थे। वो गलत कार्य करते नहीं थे। उनके प्रभार में सभी अधिकारी कर्मचारी खुश रहते थे। यदि कोई गलत या विवादित कार्य आ भी गया, तो उसका निराकरण इस तरह करते कि सभी उनकी सलाह के मुरीद हो जाते। उनकी ये सोच थी, मैंने जो कष्ट उठाये है जो समस्याएं झेली है मेरे द्वारा किसी को न उठाना पड़े। इसी भावना को लेकर उन्होंने बेरोजगार को रोजगार और असहाय को सहारा दिया। यहाँ तक कि कार्यालय 'स्टाफ' में जो पद नहीं थे उस पद को शासन से अनुमति लेकर नये पद स्वीकृत कराये पदोंपर पदस्थापना करने वाले वे पहले अधिकारी थे। उन्होंने अपने पद पर रहने का कोई सुअवसर हाथ से नहीं जाने दिया क्योंकि किसी के लिये सेवा कार्यकर उसके परिवार द्वारा दी हुई सिर्फ दुआ ही सभी से चाहते थे। ईश्वर ने शायद मुझे इसी लिये चुना है कि मैं सभी का भला कर सकूँ।

जीवन में कितने लोगों का भला किया। उसकी न कोई गिनती है न आँकड़ा ना ही वो याद रखना चाहते थे। याद तो उन्हें तब आती थी जब लोग दुआएँ व आशीर्वाद देने आते और कहते, सर आपकी वजह से हमारा जीवन सँवर गया। आपकी मेहरबानी से हम यहाँ है। वरना हमारी कोई नहीं सुनता बस ये सुनकर मुझे लगता शायद मैं किसी के काम आ सका और स्वयं को अपने भाग्यशाली माता–पिता की भाग्यशाली संतान समझते और उनके आशीर्वाद को नमन् करते उन्होंने शायद इसी कार्य के लिये जन्म दिया।

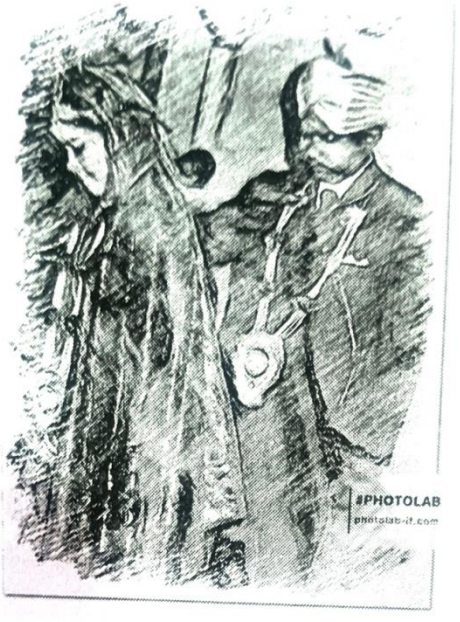



सन् 1995–96 में इनका ट्रान्सफर उत्कृष्ट कार्यो और सभी की दुआओं की वजह से छतरपुर (सहायक यंत्री) से पदोन्नत् कर कार्यपालन यंत्री) के पद पर (सागर संभाग) में उपसंचालक कार्यालय संभाग हो गया। जिसके अंर्तगत सागर संभाग के 5 जिले सामिल थे।

1. छतरपुर 2. दमोह 3. पन्ना 4. टीकमगढ़ 5. सागर

सागर आने के बाद इनके कार्यों की व्यस्तता बढ़ गयी। आये दिन 5 जिलों का दौरा कर जाँच करना पड़ता और जानकारी भोपाल मुख्य कार्यलय भेजना पड़ती। उस व्यस्तता के चलते ही आये दिन सफर करना होता। और मुझे हमेशा शिकायत रहती। कभी हमारे लिये भी समय निकाला करों। परिवार के लिये समय ही नहीं रहता। कभी–कभी मैं सोचती इससे अच्छा तो हम बिना पदोन्नति के थे। सुबह कार्यालय जाकर शाम को घर वापस आकर सुकून से रहते थे। तो हँसकर टाल जाते। अरे तुम्हें तो खुश होना चाहिये। कार्य 'जनसेवा' करने का अवसर मिला है धीरे–धीरे मैनें अपना ध्यान पढ़ाई में लगाया और डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यायलय से मैंने (डबल एम.ए.) हिन्दी साहित्य से (श्री मुंशी प्रेमचंद्र जी के उपन्यास) प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की इनका कहना था तुम्हे शौक से प्रोफेसर बनना है, तो नौकरी कर लो, पर मन से वो नहीं चाहते थे कि मैं नौकरी करूँ। उनकी सोच थी, पत्नी घर की शोभा है और उसके बगैर घर परिवार में विखराव आ जाता है। उनकी इस भावना का मैं अपने प्रति सम्मान महसूस करती और मैं नारी के प्रति इनके सम्मान की कद्रदान हूं। यहाँ भी उन्होंने सभी वर्ग के लिये कार्य किये। जो भी अपने हो या पराये किसी को ना नहीं कहा। शादी के लिये मदद, हो किसी का आपरेशन हो किसी की फीस भरना हो, कोई इलाज करवाना हो और नौकरी संबंधी तो कार्य तो उनकी आदत बन गयी थी। एक रोचक प्रसंग याद आता है कि जब भी वे सागर से भोपाल मीटिंग के लिये जाते। उन्हें रास्ते में जो भी परेशान व्यक्ति मिलता उससे मित्रता कर उसे अपना पता बताकर अपने 'बायोडाटा' दस्तावेज भेजने को कहते और उसकी हर तरह मदद करते। मैं उनके साथ सफर करती तो आश्चर्यचकित रह जाती मुझे कहते तुम बर्थ में आराम से सो जाओ, जल्दी उठने से थक जाती हो और स्वयं सहयात्री से इस तरह घुलमिल जाते जैसे पूर्वपरिचित हों। उनकी समस्याओं का समाधान करते चलते। इस तरह सभी के दिलो में आसानी से जगह बना लेते और उनका नाम लेकर लोग तारीफ करते न थकते। मैं मन ही मन खुश होती।

बच्चों को 12वी तक शिक्षा दिलाई और लगातार 18 वर्षो से सागर में ही पदस्य रहें। ये किसी कार्यपालनयंत्री के लिये नगरीय प्रशासन की पहली मिशाल थे। जो इतने वर्षो तक एक ही संभाग में रहकर 31 अक्टूबर 2014 रिटायरमेन्ट तक पदस्थ रहे। इनके सामने 10 उपसंचालक आये और आकर चले गये। सभी ने इनके साथ किये कार्यो की सराहना की और मार्गदर्शन भी लिया। जो सागर संभाग के लिये गौरव का विषय है आज सागर में जहाँ भी जाओ सोनवानीजी के नाम से कोई भी आदर से सिर झुकाकर उनका अभिवादन ही करता है। सभी याद करते है ऐसा अधिकारी न हुआ न होगा। तात्पर्य है व्यक्ति की पहचान अपने कर्मो से ही होती है ये उन्होंने अपने अल्पकालीन जीवन में सिद्धकर दिखाया।

तीसरा संस्मरण
रेल यात्रा का रोचक प्रसंग

नगरीय प्रशासन सागर संभाग (उपसंचालक कार्यालय) कार्यपालन यंत्री के पद पर लगभग 18 वर्ष अनवरत् रहते हुये। विजय जी ने रेलयात्राएँ भी बहुत की। वैसे तो उनके 5 जिलों में सरकारी गाड़ी द्वारा दौरे किये जाते थे। लेकिन भोपाल और जबलपुर रेलयात्रा ही पसंद करते थे। सप्ताह मैं दो रेलयात्रा तो ही जाती थी। इतनी अधिक मात्रा में सड़क व रेल यात्राएँ कर उनका स्वास्थ पर असर होना स्वाभाविक वा। समय पर भोजन न मिलना और अनिन्द्रा के कारण उन्हें (डायबिटीज) शुगर ने घेर लिया।

वैसे विजय जी के सबसे महान गुण की विशेषता यह रही जिसे मैं सभी आने वाली पीढ़ी को बताना चाहूँगी। ये बिन माँ–पिता और कितने ही संघर्ष के दिनों में कभी गलत आदतों या व्यसनों का सहारा नहीं लिया, सादा जीवन उच्च विचार इनकी यही विशेषताओं के कारण ही समाज में पूजनीय थे। और मैं इनकी पूजा करती थी ये मेरे लिये जीते जागते भगवान थे। इन्होंने मुझे जीवन की हर खुशी दी सभी मुझसे कहते इतना होते हुये भी आप में अभिमान नाम की चीज नहीं। तो मैं उन्हे खुशी से जबाव देती, कौन कहता है मुझे अभिमान नहीं है, मुझे बहुत अभिमान है अपने माता–पिता का और पति परमेश्वर का मुझे इन पर नाज है, गर्व है कि मैं इन महापुरूष की धर्म पत्नी हूँ। लेकिन आज मेरा एकमात्र (अभिमान) भी चूर हो गया। जैसे हमारी स्वर्ग की दुनियाँ को किसी की नजर लग गयी हो, मैं उन पलों को याद नहीं कर पाती और बरबस ही थोड़ा आखों को विराम देना चाहूँगी शब्द भी लड़खड़ा रहे है।





चलिये आगे बढ़ते है। उनकी रेलयात्रा के रोचक प्रसंग को लेकर जो उनके साथ आये दिन घटित होते और वे घर आने पर पूरे प्रसंग को

एक फिल्मी कहानी की तरह प्रस्तुत करते। हम सभी को बड़ी रूचि लेकर सुनाते। और कहते आप जब भी सफर से आते–जाते है, कोई न कोई कहानी बन जाती है। इस बात को सुनकर वो खुश होकर कहते मैं एक दिन रेलयात्रा पर अपने अनुभवों की पुस्तक जरूर लिखूँगा। उनकी इस अधूरी इच्छा को पूरी करने का भी मेरा संकल्प था। जो मैंने इस पुस्तक के माध्यम से आप सभी को अवगत कराया। एक हास्य 'प्रसंग' रोचक यह था कि एक बार जल्दी में बिना टिकट लिये ट्रेन खड़ी थी। यदि टिकिट लेते तो ट्रेन छूट जाती और जरूरी मीटिंग में पहुँचना था ट्रेन खुरई स्टेशन रूकी, लेकिन 3 मिनट के लिये उन्होने सोचा बीना में देर तक रूकती है। वहाँ टिकिट ले लेते है वहाँ काफी भीड़ व दूरी की वजह से ट्रेन से उतरकर टी.सी. को देख ही रहे थे। कि ट्रेन चलने लगी। उन्होंने सोचा जो होगा, देखा जायेगा। टी.सी. से बात करेंगे और सच बता देता हूँ और ए.सी. कोच 2 में बैठ गये जो साइड में टी.सी बर्थ होती है। और बिना डर के अखबार पढ़ने लगे। टी.सी. आये, नमस्कार किया और बोले सर कहाँ जा रहे है और आगे बढ़ गये टी.सी. ने सोचा कोई बड़े रेलवे के अधिकारी है। (फलाइंग स्कॉट) और शीघ्रता से चले गये। और किसी ने भी पूछने की हिम्मत नहीं की। और वो भोपाल सकुशल पहुँच गये। अक्सर उनकी पोषाक टी.सी. से मिलती जुलती थी वे हमेशा सफेद शर्ट और काला पेन्ट ही पहनते थे। और लोग 'यात्री' इन्हे टी.सी. समझकर ट्रेन के बारे में और सीट कन्फर्म करवाने की बाते करते। ये उनकी पहली घटना थी, फिर आये दिन यात्री धोखा खा जाते। उस हादसे के बाद से उन्होंने ये सबक लिया कि ट्रेन का 2 रिर्जवेशन करवाते, ताकि एक (कर्फम) न भी हो तो, दूसरे रिर्जवेशन से चले जायेगें।

इस तरह टी.सी. भी पहचानने लगे। सर तो 2–2 रिर्जवेशन लेकर चलते है। उनसे क्या पूछना दूर से ही नमस्कार कर हालचाल पूछते। एक बार तो एक नया टी. सी. था, उल्टी उससे इंटरव्यू लेने लगे। आपका (यूनीफार्म) ठीक नहीं, आप को ट्रेनों का समय नहीं पता। आपकी (कम्पलेन्ट) करना पड़ेगी आदि वो इतना डर गया कि हाथ जोड़कर माफी माँगने लगे। सर आइंदा गल्ती नहीं होगी बस क्या था उन्होनें टी. सी. के कन्धे पर हाथ रखा और प्यार से बोले बेटा, इस तरह तुम्हें कोई 'ब्लेकमेल' ठगी कर सकता है। तुम्हें सतर्क रहना चाहिये। और अपने कार्य को निडरता और पूरी ईमान से करोगे। तभी जीवन मे सफलता प्राप्त करोगे इस तरह टी.सी. उन्हें अपना आर्दश मानकर आज भी सम्मान देते हैं। ऐसे अनेकों रोचक घटनाएँ उनके जीवन का अंग बन चुकी थी।

चौथा संस्मरण गुरुदीक्षा का संकल्प

1998 में मेरे पिताजी ने अपने तीनों बेटों और सभी बेटी दामाद से आग्रह किया, कि मेरे जीवित रहते, सभी बच्चे हमारे सामाजिक गुरुजी से मंत्र दीक्षा ग्रहण करें। ताकि मेरा पूरा परिवार शिक्षित और दीक्षित हो जायें। यही हमारी सामाजिक परम्परा व संस्कार है। जिन्हें हमे आगे बढ़ाना है। और जीवित रखना है सभी बच्चे तो तैयार हो गये। विजय जी कहना था, यह एक बंधन है और अभी से दीक्षा नहीं लेना चाहता। (रिटायरमेंट) के बाद फुर्सत से ले सकते है विवाहित जीवन के पश्चात् पत्नी–पत्नी (गुरूदीक्षा) दोनों को साथ लेना चाहिये। इसलिये मैं अकेले भी नहीं ले सकती थी। यहाँ मैं एक बात बता दूँ। ये स्वाभाव से बहुत जिद्दी ये। अपने विवेक से ही निर्णय लेते थे। करना है कार्य तो कोई रोक नहीं सकता। और नहीं करना तो कोई करवा नहीं सकता। हालाकि वो जिस परिवेश में बड़े हुये वहाँ कोई समझाने वाला मार्गदर्शक, रीति रिवाज, अध्यात्म, परम्पराओं से अनभिज्ञ थे।

हमारे परिवार से मिलने के बाद ही उन्हें इन संस्कारों से अवगत हुये। और धीरे–धीरे उनका अनुशरण भी करते। उनमें वो सभी सद्गुण विद्यमान ये, जो एक आर्दश शिष्य में होते है परन्तु वे गुरू की महिमा को अपने ऊपर बहुत बड़ा बंधन महसूस करते थे। क्योंकि वे गुरुज्ञान से रिक्त थे। इस बात पर हमारी अक्सर बहस हो जाती और मैं हार जाती कि किस तरह इन्हें समझाऊँ, मनाऊँ कि जैसे संसार में व्यक्ति का जन्म संस्कार, नामकरण, मुण्डन, जनेऊ, विवाह, संस्कार जरूरी है। वैसे ही दामत्यजीवन में दीक्षा संस्कार भी उतना ही महत्वपूर्ण है। उसके बगैर जीवन से मोक्ष की प्राप्ति संभव नहीं और फिर रिटायरमेट के बाद पता





नहीं, क्या स्थिति हो मैं कहती आप, अपनी इच्छानुसार श्रृद्धा से गुरु जी चुन लो मैं भी आपके अनुसार दीक्षा ले लूँगी। आज हमारे पास ईश्वर और पूर्वजों की कृपा से सब कुछ है। पर जीवन में सबसे बड़ी कमी गुरू की है। ये कमी पूरी हो जाये। तो हमारा जीवन स्वर्ग बन जायेगा। जो भी धार्मिक अनुष्ठान, यज्ञ, अभिषेक, पूजन हवन हम करते हैं वो शीघ्र ही ईश्वर तक पहुँचते हैं और हर कार्यो मे सफलता प्राप्त होती है। गुरु की कृपा और छत्रछाया (आशीर्वाद) से जीवन धन्य होता है। और हम हर पल 'श्वांस श्वांस' में उनका सहारा महसूस करते है। उनसे हमें सद्मार्ग में चलने की प्रेरणा मिलती है मैं बस यहीं मिन्नत करती हूँ। आप सिर्फ मेरे साथ दीक्षा ले लो। बाकी सारी जिम्मेदारी मेरी। मैं आपको कभी कोई कार्य के लिये प्रतिबंधित नहीं करूँगी। और वो हँसकर टाल जाते। समय आने पर लेगे, 1994–95 से लगभग 10 वर्ष लगे मुझे इन्हें दीक्षा के लिये राजी करने में आप सोच सकते है। ये कितने जिद्दी थे। हमारे घर में आये दिन, धार्मिक आयोजन होते रहते थे। और साधु संत महापुरुषों का आना जाना लगा रहता था। हमारे पिताजी, उनकी सेवा में लगे रहते और घर में भजन–प्रवचन से भक्तिमय वातावारण बन जाता, और सामाजिक लोग व पास पड़ोसी भी धर्म संत्सग लाभ लेते और स्वयं को कृर्ताथ करते।

मैं करीब 10 वर्षो से टेलीविजन के संस्कार चैनल पर प्रातः 7.30 बजे विश्व जाग्रति मिशन के संस्थापक गृहस्थ संतश्री सुधांशुजी महाराज के प्रवचन सुना करती थी, और साथ–साथ प्राणयाम भी करते जाती। क्योंकि सुबह–सुबह बच्चों के स्कूल व इनके आफिस के कार्यो में ही समय निकल जाता। मैं निर्धारित समय पर अपना आसन लेकर बैठ जाती और 8 बजे तक सिर्फ आधा घंटे के लिये प्रवचन के साथ प्राणायाम करती और एक नई ऊर्जा के साथ, नये दिन की शुरूआत करती ये सिलसिला अनवरत् आज भी जारी है। इससे मुझे प्राण शक्ति के साथ–साथ विचारों की शक्ति मिलती, जिससे मेरा अन्तः करण शुद्ध होकर जीवन में अध्यात्म परिवर्तन होने के साथ

मुझे सत्संग के माध्यम से मेरे मन में गुरू के प्रति अगाधश्रृद्धा बढ़ गयी। और मै मन ही मन ये संकल्प करती, कि यदि मेरी भक्ति में इतनी शक्ति है तो एक दिन इनका भी हृदय परिवर्तन होगा। और हम दोनों शीर्घ ही गुरूदीक्षा प्राप्त करेंगे। सन् 2004 में सतगुरू सुधांशुजी महाराज का आगमन उज्जैनी महाकाल की नगरी में कुंभ के अवसर पर हुआ। मेरी हार्दिक इच्छा थी। म.प्र. के उज्जैन जिले में गुरुदेव का आगमन हुआ है। और अवसर भी अनुकूल है क्यों न हम कुंभ स्नान के साथ गुरू गंगा ज्ञान भी प्राप्त कर लें और महाकाल की कृपा से गुरुदेव के दर्शन भी हो जायेंगे। मैंने अपनी हार्दिक इच्छा से इन्हें अवगत कराया तो इनका साधारण सा जवाब था। कि मैनें तुम्हें शुभकार्यो के लिये कभी मना किया है क्या, तुम चले जाओं मैं तुम्हारी, पूरी व्यवस्था करवा देता है। तुम्हें कोई परेशानी नहीं होगी। पर मुझे अभी समय नहीं, चुनाव में व्यस्त हूँ। हम बाद में चलेंगें इनकी दो टूक बातों से में आहत हो गयी। मैं निराश तो हुई पर गुरू के प्रति इतनी श्रृद्धा दृढ़ थी। कि आशा भी नहीं छोड़ी। इतने में दो (सब इंजीनियर) कार्यालय से घर आये और उन्होंने कहा, सर आपकी ड्यूटी भी निरस्त हो गयी। चुनाव की तारीख आगे बढ़ा दी गयी। आप (मैडम) के साथ जा सकते हैं। मुझे आशा की किरण नजर आई। फिर इन्होने नाराजगी से कहा चलो चलते है पर दीक्षा लेने के लिये विवश मत करना मैनें सोचा किसी तरह उज्जैन तो पहुँच जायें फिर सोचेंगे, फरवरी 2004 को हमारा रिजर्वेशन सागर से उज्जैन के लिये हो गया। प्रातः 10 बजे में खुशी–खुशी सारी तैयारी के साथ इनके साथ स्टेशन पहुँच गयी। मैं खुश थी, ये उदास, जैसे मैनें कोई गुनाह कर लिया हो मैं विचारमग्न थी ट्रेन की गति धीमी होने लगी और एक हल्का सा झटके के साथ ट्रेन रूक गई। सवारी उतरने लगी शायद भोपाल स्टेशन आ गया था। इनका आफिस से फोन आया। कुछ जरूरी फाइलों में दस्तखत करना है। यदि भोपाल आ जाते तो अच्छा होता मीटिंग में रखना है, भोपाल स्टेशन पर आकर ट्रेन करीब एक घंटा दूसरी ट्रेन की क्रासिंग के लिये रूकी थी। इसी बीच उन्होने भोपाल कार्यालय से फाइल लेकर कर्मचारी को स्टेशन बुलवाया। और मुझसे कहने लगे। भोपाल उतर जाते है, फाइलें और मीटिंग से फ्री होकर उज्जैन चलेंगे। वो तो यही चाहते थे। पर मेरी जैसे पैरों तले जमीन खसक गयी। अब मुश्किल है उज्जैन पहुँचना। इतने में कर्मचारी फाइलें लेकर पहुँच गया। और वो फाइलों मे व्यस्त हो गये। ट्रेन विलम्ब होने के कारण सारे यात्री ट्रेन से उतर कर टी.सी. से पूछ रहे थे कितना समय और लगेगा। उन्होने जवाब दिया सारी ट्रेने विलम्ब से चल रही है कुंभ की वजह से करीब एक घंटा लग सकता है। मैं भी उतरकर विचलित मन से इधर–उधर देखती, कोई तो मेरी मनः स्थिति समझने वाले हो, सामने दो महिलाएँ पत्थर की कुर्सी पर बैठी मुझे देख रही थी। और आपस में बातें कर रही थी। शायद अकेली है कोई परेशानी में है। मैंने उन्हें देखकर भी अनदेखा किया और ट्रेन में चढ़ने लगी। तो पास आकर उनमें में से एक महिला बोली, बेटी कहाँ जा रही है। मैंने मुँह फेरकर जवाब दिया उज्जैन, अरे हम भी उज्जैन जा रहे हैं क्या बात है बड़ी उदास हो महाकाल की नगरी तो खुशी से जाना चाहिये। बस इतना सुनते ही मेरी आँखे भर आयी और मैनें अपनी हार्दिक इच्छा

जतायी। वो दोनों सभ्रांत घर की सुशील महिलाऐं थी। वो मेरी श्रृद्धा लगन, भाँप गयी और बोली बेटा आधे रास्ते तक आ गयी है। हार मत मानना मातारानी तुम्हारी हार्दिक इच्छा जरूर पूरी करेंगी अपना इरादा नहीं बदलना। इतने में मेरे पति देव भी आ गये ढूँढते हुये और बोले मैंने फाइलों पर दस्तखत कर दिया है, कर्मचारी वापस हो गया चलों ट्रेन चलने का समय हो गया और हम अपनी 2 सीट पर बैठ गये। 10 मिनट बाद ट्रेन चल दी अभी भी मुझे ऐसा लग रहा था कि फिर कोई फोन ना आये और हमें वापस जाना पड़ें। इसी सोच विचार के साथ उन महिलाओं की बातें मुझे ढाँढस बंधाती, कि ये मेरी परीक्षा की घड़ियाँ है। इनसे मुझ ही निपटना है। इसी उधेड़बुन में खोई, कि अचानक इन्होंने पानी माँगा और बोले समान चेक कर लो उज्जैन आने वाला है आज तो 4–5 बजे तक पहुंचेगे। तो कल ही दर्शन होगें। आज महाकाल के दर्शन कर लेते है। कल कुम्भ स्नान के पश्चात् गुरुजी के दर्शन कर लेना। मैनें हाँ में सिर हिला दिया। उज्जैन पहुँचकर पता चला प्रातः 9 बजे से दीक्षा समारोह प्रारम्भ है। वहाँ नगरनिगम के अधिकारी ने हमारी पूरी व्यवस्या कर दी हमने शिप्रा नदी में स्नान किया कार्यक्रम और गुरुदीक्षा हेतु । श्रीफल फूल माला, शाल, वस्त्र आदि लेकर कार्यक्रम स्थल पहुँचे जहाँ गुरुजी कुछ ही समय में पहुँचने वाले थे। मुझे बेसब्री से उस घड़ी का इंतजार था। जैसे ही 9 बजे सद्गुरू देव महाराज की जय के उद्घोष से सारा पंडाल गूज उठा।

गुरूजी के मंच पर आसीन होते ही सभी शिष्य गण स्वागत हेतु माल्यार्पण चरण वंदना के लिय कतार बद्ध खड़े हो गये स्वागत् पश्चात् गुरूजी ने अपनी मधुरवाणी से आशीर्वचन दिये। सभी दीक्षार्थी को कार्यकत्ताओं ने कतार में बैठने की व्यवस्था की। सारी तैयारी पूर्ण होने पर गुरूजी ने सभी दीक्षार्थी को पुनः सोचने और चिन्तन करने का अंतिम अवसर दिया और सभी से निवेदन किया कि जो भी दीक्षार्थी तन, मन, धन से समर्पित गुरू के प्रतिपूर्ण श्रद्धा रखते हैं। और किसी के दबाव या प्रभाव के कारण तो नहीं लेने चाहते वे अभी भी यहाँ से सहर्ष जा सकते है। मुझे लगा ये अंतिम अवसर भी ना चला जाये, मेरी नजर गुरूजी से ज्यादा इन पर टिकी थी। ये उठकर न चले जाये, पर शायद गुरूजी के दर्शन मात्र से ही इनकी मनः स्थिति बदलने लगी थी। कहने लगे, तुम्हारी इच्छी पूरी हो गयी। पर मुझे तो जाल में फँसा ही दिया। तंज कसते हुये मुस्कुरा दिये। और मैंने राहतभरी साँस ली आज मंत्र दीक्षा के विषय में ही प्रवचन कर गुरूदेव ने दीक्षा मंत्र सभी शिष्यों को दिया। साथ ही आशीर्वाद देने गुरूजी सभी शिष्यों के समीप आये और सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद की वर्षा की। सभी शिष्य धन्य हो गये। गुरू वर की चरण वंदना कर हम सभी ने प्रसाद ग्रहण किया।

मैं मन ही मन बहुत खुश थी कि मेरी वर्षो की तपस्या पूर्ण हुई जो मुझे असंभव सी लगती थी। उन्होनें चुप्पी तोड़ते हुये कहा। ये तो बड़ा आसान कार्य था। मुझे लगा पता नहीं क्या–क्या करना होगा कैसे कर पाऊँगा। मैंने बड़े प्यार से जवाब दिया। आपने मुझ पर बहुत बड़ा उपकार किया है अब तक हमारा जीवन सब कुछ होते हुये भी अधूरा सा था। गुरूजी की कृपा से पूर्ण हो गया शायद ये चमत्कार था। रास्ते भर

गुरूजी के विषय में ही चर्चा करते रहे। जो कल तक उनसे दूरी बनाते थें अब उनका आगमन कब होगा हम उन्हें सागर कब आमंत्रित करेगें। हमने 2007 में उनका कार्यक्रम भी करवाया। सागर में उनके परम शिष्य अनिल झा जी द्वारा फिर गुरूदेव की कृपा इन पर मुझ से ज्यादा होने लगी। इन्होंने सन् 2011 में हमारी 25वीं सालगिरह पर मुझे भोपाल में एक घर और उसमें गुरूदेव का कार्यक्रम तोहफे के रूप में प्रथम बार दिया। 2014 में पुनः गुरुजी के भोपाल आने पर हमने पुनः चरण वंदना के लिये आमंत्रित किया। घर में द्वितीय अवसर था सारी तैयारियाँ हो चुकी थी। इनकी अचानक तबियत बिगड़ी और हमें इन्हें नेशनल हास्पिटल में भर्ती कराना पड़ा शुगर की वजह से पहला अटैक था, मैंने सोचा इस बार गुरुजी का कार्यक्रम स्थगित कर देते है। और गुरूजी को वस्तु स्थिति से अवगत करा देते हैं, पर विजय जी की गुरूजी के प्रति श्रृद्धा लगन ने हमें कार्यक्रम स्थगित करने से रोका, और कहा की किसी को आभास नहीं होना चाहिये। कार्यक्रम पहले से भी अच्छा होना चाहिये, गुरूजी की कृपा से मैं शीघ्र स्वस्थ होकर लौट आऊँगा। ऐसे अवसर बार–बार नहीं आते। विजय जी की आँखों में गुरू के प्रति इतनी श्रृद्धा देख अश्रुधारा बहने लगी। उनके प्रति मेरी भावना ईश्वर से बढ़कर हो गयी। अंतर मन से तो उनके स्वास्थ से ही चिन्तित थी। बाह्यमन से मैं गुरूदेव के स्वागत की तैयारी में व्यस्त थी। और बनावटी मुस्कुराहट से सभी का स्वागत और अभिवादन कर रही थी। गुरूजी के पूछने पर कि बच्चों के पिताजी दिखाई नहीं दे रहे। तब हमने बड़े दुखी मन से पूरा वृंतात सुनाया। गुरुदेव ने कहा, हास्पिटल में फोन लगाओं और अभी मेरे परमशिष्य से बात कराओं और फोन पर ही उन्हें ढेर सारा आशीर्वाद दिया और बच्चों से कहा तुम एक महानपुरुष की संतान हो। तुम लोग बड़े भाग्यशाली हो जो तुम्हें ऐसे जीवन दाता मिले। उनका सदा ध्यान रखना मैं उनसे शीघ्र मिलूँगा। दो दिनों बाद ये स्वस्थ होकर घर लौटे हमने पहली बार उनकी अनुपस्थिति में कोई कार्य किया था। पर उन्हें इस बात की संतुष्टि थी, कि सब ने मिलकर कार्यक्रम को सफल बना दिया और मैं स्वस्थ होकर वापस आ गया।

जब से गुरूदीक्षा ली, सारे कार्य उनकी कृपा से सफल होते गये। बेटे की नौकरी, बेटी का विवाह, नातिन का जन्मोत्सव व 3 मार्च 2017 को गुरूजी का पुनः आगमन भोपाल हुआ। और हमें उनकी चरण वंदना कार्यक्रम घर में रखा, सारी कॉलोनीवासी उनके दर्शन और आशीर्वचनों से धन्य हो गयी। उसका श्रेय सभी ने हमें दिया इस तरह भोपाल की सिद्धार्थ लेकसिटी में स्थित घर लगातार तीन बार गुरुजी के चरण पड़ने से मंदिर बन गया। और हमारे सपनों का स्वर्ग हकीकत बन गया। इस बार गुरूदेव ने विशेष आशीर्वाद दिया। पिछली बार ये नहीं मिल पाये थे। गुरूजी ने कहाँ यदि शिष्य की श्रृद्धा में वो क्षमता हो तो गुरू स्वंय, शिष्य को ढूँढकर वहाँ पहुँच जाता है। ये थी हमारी दीक्षा लेने की दिलचस्प स्मृति।

(गुरु से लगन कठिन है मेरे भाई सत्य ही कहा है सद्गुरु जी ने।)

पाचवाँ संस्मरण
मूक प्राणी का मालिक के प्रति त्याग और बलिदान

इनका जन्म 20 अक्टूबर सन् 1954 को हुआ था इसलिये ये अपने हर कार्य 20 तारीख को ही करते थे। मकान का उद्घाटन, गाड़ी लेना है, कहीं शुभ यात्रा करना है। कोई भी कार्य करने के लिये 20 तारीख का मुर्हूत शुभ मानते थे। ऐसे तो 20 तारीख को अनेको उपहार और कार्यक्रम आयोजित किये गये। लेकिन एक उपहार रोचक और यादगार बन गया। मैं इनके जन्मदिन में अकसर कुछ नया उपहार भेंट करती थी। 20 अक्टूबर 2012 को हमारे घर की धोबिन एक छोटे से (जर्मनशेर्फड) कुत्ते के बच्चे को लेकर आयी। और बोली दीदी इसे ले लो। जो साहब के यहाँ काम करती थी उनका ट्रान्सफर बहुत दूर हो गया है। वो मेरे पास छोड़ गये। मैं इसकी अच्छी परिवरिश नहीं कर सकती। आपके यहाँ अच्छी तरह रहेगा। मैनें मना किया हमारे यहाँ पहले ही एक पफी 'डॉगी' है। हम नहीं रख सकते। वो बड़े दुखी मन से बोली दीदी। दोनों डॉगी साथ में पल जायेगें। मेरे पास तो खुद का ठिकाना नहीं। उसे क्या–क्या खिलाऊँगी इतने में एक कार आकर रूकी। कार में से इन्हें उतरता देख मै हतप्रद थी। जन्मदिन पे इन्होंने तो हमें अच्छा (सरप्राइज) दिया खुशी के मारे कुछ सूझा नहीं तो मैंने कहां मैं कोई उपहार नहीं ले पाई अब तक धोबिन हमारी बातें सुन रही थी, इन्होंने कहाँ ये क्यों बैठी है इसे कुछ दे दो। तो मैंने उसे 1500 रूपये थमाते हुये कहा। ये लो और छोटे (डॉगी) बच्चे को इनकी गोद में डाल दिया ये आपके जन्म दिन का उपहार और इसका नाम आज से 20 (ट्वन्टी) रख देते है और आज भी वो जीता जागता उपहार हमारे साथ यादगार स्वरूप है। संयोग से इसके पहले 2011 में बेटे ने 20 अक्टूबर को ही एक वोडाफोन



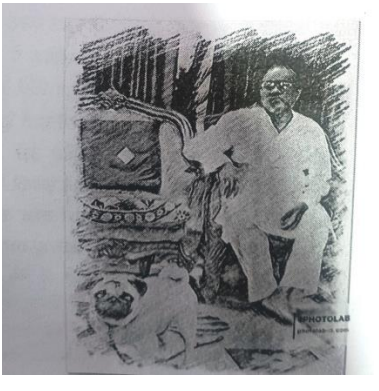

(पफी) लेकर आया था जिस का नाम हमने (ओगी) रखा था। उसे बच्चों के साथ में रहने की आदत थी। पहले ये काफी नाराज हुये। पर बेटे की खुशी के लिये मान गये। कहते है पालतू जानवर अपने मालिक पर आई विपत्ति या काल अपने ऊपर ले लेते है।

रिटायरमेंट के बाद 10 नवम्बर 2014 को जब इन्हें पहला दिल का दौरा पड़ा, तब इन्हें हम अस्पताल ले जाने की जल्दी में थे। तब वो इनके पास जाकर गोल घूमकर बैठ जाता। हम घबराहट में उस पर ध्यान दे नहीं पाये। और इन्हें नेशलन हॉस्पिटल ले गये। वहाँ एक सप्ताह रहने पर कोई आराम न मिला और हालत बिगड़ती गयी। यहाँ घर में उसी दिन से (ओगी) पफी की हालत बिगड़ने लगी। हमने सोचा इन्हें नेशलन से बदल कर एल.बी.एस. अस्पताल में इलाज करवाते हैं। उधर (ओगी) को भी बेटा अस्पताल ले के जा रहा था। शायद वो अपने मालिक तक पहुँचना चाहता था। जैसे ही हमने इन्हें नेशनल अस्पताल से बाहर लाकर एम्बूलेन्स में शिफ्ट किया। उन्हें देखते ही उसने कार में ही दम तोड़ दिया। और एल. बी. एस. पहुँचने के बाद इनकी स्थिति में सुधार आने लगा और ये एक सप्ताह बाद स्वस्थ होकर घर लौट आये। हम समझ गये उस मूक प्राणी ने अपने प्राणों की बलि देकर ये कहावत उसने सिद्ध कर दी, कि मालिक या घर के मुखिया पर आई विपत्ति या संकट वो अपने ऊपर ले लेते है। इस तरह हमारे जीवन का यह अविस्मरणनीय पल बन गया। उसके त्याग को हम आजीवन नहीं भूल सकते। इस तरह विजयजी 20 अक्टूबर यानी एक शुभ अंक लेकर इस दुनिया में आये और 22 अगस्त अर्थात 22 दो शुभ अंक को दोहराकर चिरनिद्रा में लीन हो गये।

छठवां संस्मरण
अमिताभ जी से मुलाकात का वाक्या

बात उन दिनों की हैं, जब हम दोनों बच्चों की उच्चशिक्षा के लिये सागर से भोपाल आये थे। सन् 2010–11 में प्रकाश झा की फिल्म आरक्षण की शूटिंग जनवरी–फरवरी माह में ओरिएंटल कॉलेज और राजहोम्स की मिनाल कॉलोनी के कर्वड केम्पस में चल रही थी। इस फिल्म में सैफ अली खान, दीपिका पादुकोण मुख्य कलाकर अमिताभ बच्चन थे।

मैंने बचपन से ही स्वप्नसंजो रखा था। जीवन में एक बार सदी के महानायक अभिताभ बच्चन जी से अवश्य मिलना है और विजयजी से अपनी हार्दिक इच्छा जताई तो बोले तुम्हारी प्रतिज्ञा जरूर पूरी होगी और शूटिंग मे जाने की सहर्ष अनुमति दे दी हम किसी तरह पास बनाकर जूनियर कलाकार बनकर दोनों बच्चों के साथ प्रतिदिन शूटिंग पर जाते। सभी का मकसद एक मात्र अमितजी से मिलना था, मिनाल में शूटिंग के दौरान वो सुनहरा अवसर मिल ही गया। हालाकि हमारे मोबाइल शूटिंग में प्रवेश करते ही बंद करवा दिये जाते थे, ताकि कोई फोटो या वीडियोग्राफी न कर सके।

14 फरवरी (वेलेन्टाइन डे) के दिन मेरे मन में एक विचार आया ऐसे तो अमितजी से मिलना मुश्किल है, मध्यांतर में मैंने पर्स से पेन निकाला, लेकिन लिखने को कोई कागज नहीं था। सामने मैदान पर अखबार का टुकड़ा पड़ा था, मैनें उसे उठाया और अखबार में जो एक इंच की जगह खाली होती है, उसी में अतिशीघ्रता से बहुत ही बारीक अक्षरों में उपर्युक्त पत्र लिखा और जैसे ही अमितजी अपनी बेनिटी वैन की ओर जा रहे थे। तभी मैंने सुरक्षा घेरा तोड़ते हुये, उन्हें पत्र थमा दिया और जैसे ही चरण छूने के लिये झुकी, तो सुरक्षा गार्ड ने मुझे रोकना चाहा। लेकिन अमितजी ने हँसते हुये, मुझे दोनों हाथों से उठाया और अपने अंदाज में बोले, अरे ये क्या कर रही हैं आप, मैंने कहा सर ये मेरा अधिकार है अमितजी ने सुरक्षागार्ड को हिदायत दी, बहनजी को मिलने दिया जाये उनके साथ बदसलूकी न करें। इतना सुनते ही घबराहट और खुशी के मारे मेरे शब्दों की जगह आँसू निकल पड़े। बस इतना ही कह पाई, सर ये पत्र आपके लिये।

मैंने कल्पना भी न की थी, मेरा सपना इतनी जल्दी साकार होगा, और अमितजी मेरे इतने दयनीय जर्जर पत्र का जबाव इतनी शान और सम्मान के साथ देंगे।

मैं हतप्रद थी, जब दूसरे दिन अखबार मैं पूरा वाक्या समाचार की सुर्खियाँ बन गया फोन पर बधाईयों का ताँता लग गया। मैंनें सोचा अमितजी ने मेरा पत्र कचरा समझकर फेंक दिया होगा। लेकिन उन्होंने अपने ब्लॉग पर वो पत्र डालकर तत्काल

उसका जवाब दिया। उनकी यही विशेषताऐं उन्हें लोकप्रिय व सदी का महानायक बनाती हैं। उनकी प्रशंसा के लिये शब्द कम पड़ जाते है। मेरी प्रतिज्ञा पूरी होने पर विजयजी अत्यन्त प्रसन्न हुये और बोले अब तूम्हें कौन बनेगा करोडपति में अवसर ना भी मिले तो कोई बात नहीं। हम तो उनसे मिलकर ही ''करोडपति'' हो गये। इस तरह हमारे जीवन का ये वाक्या हमारे लिये आजीवन यादगार बन गया।



वाकया भोपाल की एक 'बावली' ने बिग बी को थमाया पत्र

शहंशाह न सही 'विजय' ही सही

एजेंसी, नई दिल्ली

अमिताभ बच्चन के करोड़ों दीवानों में शुमार भोपाल की एक लड़की को जब बिग बी न मिल सके तो उसने 'विजय' से फेरे लेकर अपनी हसरत पूरी कर ली। अमिताभ की जंजीर, दीवार और अग्निपथ समेत बहुत सी फिल्मों में उनका नाम 'विजय' था। फिल्म 'आरक्षण' की शूटिंग के सिलसिले में भोपाल में मौजूद अमिताभ ने अपने ब्लॉग पर लिखा, 'शूटिंग खत्म होते ही मैं अपने वैन की तरफ बढ़ने लगा। तभी सुरक्षा घेरा तोड़ते हुए एक महिला मेरे पास आ गई। उसके मुताबिक, 'वह महिला बहुत भावुक और खुश थी।' वह महिला अमिताभ को पत्र देकर चली गई। इंदु नामक इस महिला का अमिताभ को दिल को छूने वाला लगा।

आरक्षण फिल्म की शूटिंग के दौरान हुआ वाकया

■ अपने ब्लॉग पर अमिताभ ने किया पत्र का खुलासा

■ बिग बी ने कहा, महिला का पत्र दिल को छूने वाला

क्या लिखा था पत्र में

"सर, मैं जानती, आपसे सिर्फ दो बातें करना चाहती हूं, लेकिन संभव नहीं था। जिसे ईश्वर की शक्ति तो प्राप्त है, वह भी अभूत रह जाता है, लेकिन जिसे गुरु-कृपा प्राप्त हो जाती है, उसे जीवन में सब कुछ मिल जाता है। इसलिए मुझे पूरा विश्वास है कि आप मुझे जरूर मिलेंगे। मुझे अमिताभ के मुकाबले आपका विजय नाम ज्यादा प्रसंद है, चूंकि आपको पाना तो सभी के बस में नहीं, इसलिए मैंने 'विजय' नाम के व्यक्ति से विवाह कर लिया।"

आपकी

इंदु विजय सोनवाणी।

सातवां संस्मरण
''कर्मठ और ईमानदार सेवक

वर्ष 2011 में जब सागर से भोपाल नये भवन का उद्घाटन व हमारी 25वीं शादी की सालगिरह पर हमें घर की देखरेख (सुरक्षा) हेतु एक वफादार सेवक की अत्यंत आवश्यकता थी, घर में 3 डॉगी भी थे। अतः इन्होंने सागर ग्राम बरौदा से एक 18 वर्षीय अजय दाँगी नाम के सेवक को भेजा। जो एक छोटे से परिवार के 4 सदस्य 3 भाई 1 बहन थे। उनका कृषि कार्य एक मात्र सहारा था।

आज 15 वर्षो से हमारे साथ है हम सभी का सहारा बनकर खड़ा रहा। हम सभी चाहते हैं उसका जीवन सफल बनाकर उसकी जिंदगी का सहारा बने। जो उसकी, सेवा, त्याग, कर्तव्य निष्ठा, ईमानदारी का पारितोषक होगा।

जैसा विजय जी का व्यक्तित्व था वैसे ही सेवक भी मिले, मेहमूद, मैयादीन, महेश भाई, जिन्होंने 5–5 वर्ष ईमानदारी से कार्य किया। पर अजय 15 वर्षो से सेवा में तत्पर है उसकी जितनी मिशाल दूं कम है। हमारा स्नेह और आशीर्वाद उसके साथ है।

''विजय जी का कथन था''
हमेशा ऐसे पेड़ के समान बनो,
जो छाया के साथ फल भी दे।



आठवां संस्मरण
नाती (अविराज के जन्म 20 ता. का संयोग)

मुझे यह बताते हुये अत्यंत हर्ष व प्रसन्नता हो रही है कि विजय जी के स्वर्गगमन के 8 वर्ष पूर्ण होने पर मेरे घर नाती (अविराज) का जन्म 20.03.2026 को हुआ। वहीं नैन नक्श, उनका ही रूप, शांत स्वभाव लेकर जैसे, उनका ही पुर्नजन्म हो, हम ईश्वर की अनुकंपा से स्तब्ध और हार्दिक प्रसन्न थे उनके इस अनमोल तोहफे के लिये ईश्वर का हदृय से धन्यवाद और शुक्रिया करते हैं।

पहले मेरी पुस्तक का प्रकाशन वर्ष 20.10.2020 रखा गया था लेकिन कोरानाकाल और समस्याओं के कारण संभव नहीं हो सका, मुझे निराशा हुई, समय व्यतीत होता गया। संयोग से 20.03.2026 को मेरे नाती का जन्म हुआ, उसी दिन प्रकाशन कार्यालय से फोन आया कि अपनी पुस्तक शीघ्र भेजिये हम 20 ता. तक प्रकाशित करने का प्रयास करेगें। मैं तो जैसे इसी क्षण की प्रतीक्षा में थी।

आज मैं गर्व से कह सकती हूँ, शायद इसलिये पुस्तक प्रकाशन में विलंब हो रहा था जैसे मेरी पुस्तक को नाती के जन्म का इंतजार हो। अब मेरी पुस्तक प्रकाशन के लिये पूर्ण रूप से तैयार है। विजय का शुभांक 20 तारीख था। वे अपने शुभकार्यो का शुभारंभ 20 तारीख को ही किया करते थे, अतः उनकी जीवनी भी 20 ता. तक प्रकाशित करने का मेरा संकल्प है ताकि उनकी जीवनी को 20 ता. के साथ अमर कर संकू।

मुझे आशा है स्व. विजय कुमार सोनवानी जी की पावन स्मृति में ''विजयपथ'' पुस्तक उनकी जीवनी के माध्यम से प्रिय पाठकों के मानसपटल तक पहुंचाने का अथक प्रयास है। अपने हदृयोद्गार, संपूर्ण जनमानस को शब्दपुष्पों के माध्यम से मानव जीवन के संघर्ष, मानव दर्शन का संपूर्ण चित्रण है। ''विजय पथ'' के प्रकाशन से मानवीय मूल्यों एवं मानवीय जिज्ञासाओं की पूर्ति में सहायता मिलेगी, मुझे पूर्ण विश्वास है, कि शब्दों की संकलित ऊर्जा से मानवता के कल्याणार्थ एक सफल प्रस्तुतिकरण होगा। आप मेरी भावनाओं को उचित स्थान प्रदान करेगें। प्रिय पाठकों आपके प्रेम और आशीर्वाद के लिये हृदय से आभार व धन्यवाद।





